अध्याय–चतुर्थ

नासिरा शर्मा के अन्य विधाओं में उद्घाटित विविध पक्ष

अध्याय–4

नासिरा शर्मा के अन्य विधाओं में उद्घाटित विविध पक्ष

कहा जाता है कि साहित्य समाज का प्रतिबिंब है क्योंकि साहित्य और सामाजिक जनजीवन के बीच कोई मौलिक अन्तर नहीं है। उसकी आन्तरिक अनुभूति संवेदनाओं और बोधता पर रेखांकित होती है। नासिरा शर्मा के कथा साहित्य के पात्र उनकी स्थितियों, संवेदनाओं और बोध का फलकीकरण हुआ है जो आसमान तक फैलकर फिर सिमट कर ह्रदय के भारीपन और भावनाओं में रह जाते हैं। नासिरा शर्मा ने अपने कथा साहित्य में जीवन के विभिन्न अभिमतों को दर्शाया है जिसमें सामाजिक मूल्यों, संवेदनाओं तथा युगबोध की स्थिति को ग्रहण कर अपेक्षणीय बताया है। युगबोध के संबंध में यह बात विचारणीय है कि उसकी उपस्थिति साहित्य में कृत्रिम रूप में नहीं है, अपितु स्वाभाविक रूप में रहना चाहिए। नासिरा शर्मा ने अपने साहित्यिक कृतियों में संवेदनाओं और युगबोध को अंग बना कर उभारा है। जिसमें जीवन के कई युगीन, सामाजिक, पारिवारिक, यौवनिक और मनोवैज्ञानिक प्रभावों को अपने कथा साहित्य में व्यक्त किया है। जो उनकी सार्थकता, दक्षता एवं पाण्डित्य का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

नासिरा शर्मा औरत को सबसे पहले अपनी माँ के जरिए महसूस करती हैं। उन्होंने लिखा है मेरे अंदर औरत की ऐसी ठोस प्रतिमा आकार ले चुकी थी, जिसको माँ ने गढ़ा था। 'औरत के लिए औरत' महज स्त्री–विमर्श के तुमल कोलाहल में एक और मुनादी न समझी जाए बल्कि नासिरा के ही शब्दों में उसको बेहतर जिन्दगी जीते देखने की कामना रखते है। नासिरा शर्मा के अनुभव जगत में केवल भारतीय स्त्रियाँ ही नहीं हैं, विदेशों में रह रही स्त्रियों का अनुभव बहुल संसार भी शामिल है। नासिरा शर्मा स्त्री चेतना के विकास के तमाम आयामों को उठाते हुए मैक्सिको में हुए संयुक्त राष्ट्र महिला सम्मेलन से लेकर अतीत में स्त्री अत्याचारों के विरूद्ध लामवंद सुधारवादी शख्सियतों राजा राम मोहन राय और नज़ीर अहमद के प्रयत्नों

का नोटिस भी लेती हैं। वह यह भी जानती हैं कि समाज कानून से नहीं बदलता बल्कि भीतर की चेतना से बदलता है। शताब्दियों से अधीनता में जीवन बसर करने वाली महिलाओं की संख्या आज कम नहीं है। जिन्हें स्त्री से इंसान तक का दर्जा पाने के लिए सतत् जूझना पड़ रहा है। स्त्री हालत इतने से सुकर नहीं हैं। महानगरों में स्त्री चिंतन करने वाले स्त्रियों के हितैषी भी यह बात जानते हैं।

नासिरा शर्मा स्त्री–पुरूष के बीच सामंजस्य के अभाव के पीछे दोनों के असंतुलित विकास को लक्ष्य करती हैं। दांपत्य में जब सखा या मैत्री भाव से अलग हीन भावना की जड़ें जमने लगती हैं तो आगे चलकर यह भावना प्रताड़ना–हिंसा की सरहदों को छूने लगती हैं। नासिरा शर्मा के उपन्यास 'शाल्मली' की नायिका शाल्मली को देखें तो वह अपने पति नरेश से सामंजस्य बिठाने की तमाम कोशिशों के बावजूद विफल रहती है। नरेश हीन भावना से उसके प्रति सहज नहीं रहने देती। फिर भी शाल्मली परिवार की डोर से बंधी पति से निपटने और मुक्त होने का मार्ग नहीं खोजती बल्कि वह सही मायने में नारी–मुक्ति और स्त्री की स्थिति को बदलने में यकीन रखती है।

नासिरा शर्मा ने अपने नये विचारों के द्वारा नई पीढ़ी के सामने नये भविष्य, नई तकनीक, नया पैसा, नई आरामदेय जीवन शैली को व्यक्त किया है। इसका अर्थ यह हरगिज नहीं है जो पुराना है वह पूर्ण रूप से बेकार वस्तु में बदल गया है। जीवन के अनुभवों जैसे धरोहर और व्यवहार में धैर्य, कष्ट के समय सांत्वना वे दुर्लभ रहते हैं। नासिरा शर्मा ने अपनी साहित्यिक यात्रा के माध्यम से लोगों में प्रेम, विश्वास, बल, प्रोत्साहन एवं जिजीविषा के संचार के रूप में एक हृदय से दूसरे हृदय में प्रवाहित करने का प्रयास किया। उनकी अवधारणाओं में मानव–मानव के बीच में सुख के मापदण्ड को स्थापित करना जिससे जीवन तनाव से मुक्त हो सके।

लेखिका ने सिर्फ औरत ही नहीं बल्कि किसी भी इन्सान के लिए इस बात का बहुत महत्व है कि वह अपने को कैसे कैरी करता है। वे लड़कियाँ कैसे अपने को सम्हाल कर रख सकती है। जिनकी आन्तरिक दुनिया में हरदम हल–चल रहती है, वह करना कुछ चाहती हैं, उससे करवाया कुछ जाता है। वह लगातार दबाव के

चलते एक बनावटी जिन्दगी जीने के लिए मजबूर कर दी जाती हैं। जिसकी हर भूमिका में नाटक, अभिनव और विश्वास झलकता है।

नासिरा शर्मा के अनुसार मुस्लिम समाज की पुरानी प्रथायें इन्सानों को जानवर बनने से रोकने के लिए अवश्य बनाई गई, मगर उनमें बदलाव की जगह गिरावट आई। रूढ़िवादी प्रथाओं में महिलाओं का मस्जिदों में इबादत के लिए रोजना नृत्य और संगीत से दूर रहना एवं हलाला और तलाक का मजबूरी बस शिकार होना। आज भी कई देशों में ये प्रथायें चल रही हैं। जिनको नया आयाम दिया गया है। मर्द और औरत दोनों को डॉक्टरी जाँच से गुजरना पड़ता है ताकि किसी प्रकार की पारिवारिक राजनीति से ना खेली जा सके और नपुंसक मर्द के साथ मजबूर न की जाए।

''आज यह भी एक दर्दनाक सच्चाई है कि कितनी पढ़ी–लिखी लड़कियां इन दुर्घटनाओं का शिकार हो रही हैं कि उनका प्रेमी या पति अपनी कमजोरी के बारे में नहीं बताता और बाद में यह मसला लड़की पर आ गिरता है कि वह क्या करे? वह किधर जाए? वास्तव में हमारा समाज मर्द के लिए किसी ऐसी 'खरे सोने जैसी परीक्षा' के लिए अमादा है। क्या सारी मर्यादाओं का बोझ औरत को ही उठाना पड़ेगा? वैज्ञानिक के दौर में ऐसी फूहड़ बातों का कोई औचित्य नहीं है। इस तरह की गैरजरूरी व्यथाओं से जब इन्सान को दूसरे इन्सान को मुक्त करने के लिए आगे आना चाहिए विशेषकर औरत को, जो सृजन की पीड़ा को सहती है तब एक इन्सान को जन्म देती है।''[294]

लेखिका ने भौतिकवादी संस्कृति पर अपनी विचारधारा को व्यक्त किया है। भौतिकवादिता जिस तेजी से आम इन्सान को अपने चपेट में ले रही है। उसकी सबसे बड़ी अभिव्यक्ति बाजारीकरण, व्यापारीकरण, भूमण्डलीकरण, कॉर्पोरेट मार्केट, फैशनेटिंग समाज, में नारी का बदलता स्वरूप उपभोगवादी वस्तुओं को खरीदना और उनसे जीवन मूल्यों की पूर्ति करना। आधुनिक समाज में धैर्य, सहनशीलता, सादगी और सहृदय का विलुप्त होना। दूसरा विवाह, नया दहेज, मुफ्त का धन, नई नवेली दुल्हन का आना, ये सारी बातें पहले सम्बन्ध के प्रति, उदारभाव न रखकर

---

[294] नासिरा शर्मा, औरत के लिए औरत, सामयिक प्रकाशन, जठवाड़ा नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, संस्करण 2014, पृ.46–47

एक ऐसी अपराधी मनोवृत्ति परिवार की बना देती है, जिसके अभिशाप के बाहर से आई लड़की झेलती हैं, जो इस घर की बहू हो लेती है और गलती यही मानी जाती है कि वह 'गृहलक्ष्मी' कहलाती है, मगर लक्ष्मी की खनक से कोसों दूर होती है। अपने साथ वह मायके से वे सारी सुख–सुविधाएं लाना भूल गई जिससे यह घर वास्तव में स्वर्ग बन सकता था। सेवा, निष्ठा इतने पुराने पड़ चुके भाव हैं जो जीवन से एकरसता भरते हैं, उत्तेजना नहीं, जो आज की सबसे बड़ी जरूरत है।

लेखिका ने देश काल की राजनीति चर कई प्रकार की टिप्पणियाँ की जो समाचार पत्रों के माध्यम से प्रकाशित होती रही। उन्होंने घरेलू सियासत के स्थान पर साहित्य का लबादा पहना दिया और समाज के चेहरे से पर्दा हटाया है। इसके लिए नासिरा का साहित्य और उनकी विचारधारा विलक्षण महत्व रखती हैं, जहाँ मानवीय गिरावट कटघरे में खड़ी नजर आती है, उन्होंने समाज के भले एवं बुरे किरदारों को स्पष्ट किया है। इन्सानी चेतना को उदयात्मक बनाया, परन्तु समाज में जो अपराधी प्रकृति के लोग होते हैं वे इनके माध्यम से अपराधी प्रवृत्ति सीखते हैं।

लेखिका ने लिखा है मर्द की कुंठाओं को औरत झेलती है और जीवन पर्यन्त अपने नसीब और कर्म को कोसती है, हमारे समाज में महिलाओं के प्रति आज भी अस्पष्टता है। अक्सर घरों में बहुओं को सजा के तौर पर मायके न जाने देना या पति का किसी करीबी रिश्तेदार से कहा–सुनी हो जाने पर पति का उससे न मिलने का आदेश पत्नी को चाहने या न चाहने के बावजूद मानना पड़ता है। यह भी एक तरह की हिंसा है, जिससे लड़कियाँ गहरे मानसिक संताप से गुजरती हैं। उनका खाना–पीना उनके हलक में अटकता है। हर दम तनाव में रहने से उनका स्वास्थ्य भी गिरने लगता है। इस आक्रोश का उद्‌गार ज्यादातर घरों में अधेड़ उम्र पहुंचने पर निकलते देखा गया है जब औरतें पूरी तरह हठधर्मी बन जाती हैं और प्रत्येक बंधन को तोड़ने पर उतारू हो जाती हैं। तब दूसरी तरह की हिंसा घर में अपना स्थान बनाने लगती है, जिसमें बच्चे और नौकर भी शामिल होते हैं। ऐसी औरतों को कर्कश, बदजबान, वाहियात औरत का संबोधन मिलने लगता है। बच्चे या लड़के अपना लाभ देखकर माता या पिता का पक्ष लेते हैं, तब उन्हें अपने सुरक्षित भविष्य की चिंता सताने लगती है। औरत की स्थिति बदलने में स्वयं औरत सहयोगी भूमिका अदाकर सकती है। जरूरी नहीं है यह बदलाव किसी आन्दोलन,

किसी विद्रोह, किसी निर्भरता से शुरू हो, स्वयं औरतें अपनी दयनीय स्थिति सुधारने की कोशिश करें तभी सामाजिक, पारिवारिक परिदृश्य बदलेगा। आस–पास के लोग जो बचाव और लापरवाही प्रवृत्ति के चलते औरत के विपक्ष में हल्की बातें कहने के आदी हो चुके हैं। वह अपने जबान पर लगाम देना सीख लें, वे लोग स्त्री पक्ष में बोलना चाहते हैं, तथा अपने ओठ सिले रखते हैं, तथा औरतों के लिए मुखर समर्थन करते हैं, उनको अपना नज़रिया बदलना पड़ेगा तभी समाज बदलेगा। शोधकर्ता द्वारा नासिरा शर्मा की अन्य विधाओं में उद्घाटित विविध पक्षों का निम्नांकित वर्णन किया है।

1. नारी समस्या

भारत में पिछले 67 वर्षों में सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक परिस्थितियों में बदलाव होते रहे हैं पर महत्वपूर्ण बदलाव महिलाओं की दशा में दृष्टिगत हुआ है। महिला–सशक्तिकरण के द्वारा महिलाओं की स्थिति में आमूल–चूल परिवर्तन हुआ है। हिन्दी साहित्य के समकालीन लेखकों में महिला रचनाकारों की रचनाएं स्त्री–चेतना से अछूती नहीं रही। इन महिला रचनाकारों के बहुतायत उपन्यास महिला–प्रधान रहे या उनकी परिस्थितियों से रूबरू होते रहे। मन्नू भण्डारी का 'महाभोज' उपन्यास राजनैतिक सन्दर्भो को उजागिर करता है तो वही प्रभा खेतान के 'छिन्नमस्ता' और 'पीली ऑधी' उपन्यास कुमारिका जीवन की विसंगतियों को दर्शाते हैं। साथ ही ममता कालिया का 'बेघर' 'नरक दर नरक' स्त्री जीवन की बिडम्बना को दर्शाता है। इन्हीं समकालीन रचनाकारों में एक शक्सियत हैं– नासिरा शर्मा। नासिरा शर्मा ने अपने कथा साहित्य में न केवल स्त्री समस्याओं का उल्लेख किया है, अपितु समाधान भी प्रस्तुत किया है। कुमार पंकज के शब्दों में– "नासिरा शर्मा उन रचनाकारों में हैं जिन्होंने महिला मुद्दों को अपनी कलम का निशाना बनाया है यह सच है कि महिला के दर्द को महिला से बेहतर भला कौन जान सकता है।"[295] इनकी कहानियाँ मध्यम वर्ग की उस नारी की है जो नारी–त्रासदी एवं विकृत मनोवृतियां व मानसिकताओं के बीच जीती है। इनके कथा साहित्य में स्त्री की भावनाओं और संवेदनाओं का इतना मार्मिक चित्रण है कि पाठक वर्ग कहानियां के

---

[295] कुमार पंकज, जिन्दगी के असली चेहरे, आजकल पत्रिका, पृ0सं0 145।

पात्रों में स्वयं की झलक देखता है।

नारी की भावनाओं की प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति से नासिरा जी ने समाज में नारी के अस्तित्व को अस्मिता प्रदान की। नारी जीवन की तमाम जटिलताओं ने उनकी लेखनी को संस्कार प्रदान किया। इनके कथा साहित्य में स्त्रियां के अनेक मुद्दों पर खुली चर्चा हुई है। वे आधुनिकता के नाम पर स्त्री स्वच्छंदता की पक्षधर नहीं हैं। इसलिये उनकी नारी मात्र आधुनिक होकर भी उच्छृंखल नहीं हैं।

पत्थरगली नासिरा जी का पंसदीदा कहानी संग्रह है। इन्हांने इस कहानी संग्रह के सम्बन्ध में लिखा है– "यह कहानियाँ धरती पर बसे किसी भी इंसान की हो सकती है, क्योंकि दर्द सर्वव्यापी है फिर भी इन कहानियों की अभिव्यक्ति का स्रोत एक विशेष परिवेश हैं।"[296] पत्थरगली कहानी की मुख्य पात्र 'फरीदा' है। लेकिन पत्थरगली कहानी 'फरीदा' की नहीं बल्कि उस समाज की है जो रंग–बिरंगे होते हुये भी एक जैसी समस्या से जूझ रहा है। उसकी सारी सहेलियों के घर की यही कहानी है जिनके भाई कुछ नहीं करते हैं, जिनके बाप नहीं हैं, उनको अपनी जीविका के लिये दूसरों के सामने हथियार डालने पड़ते हैं पत्थरगली में 'फरीदा' और बड़े भाई की टकराहट पुरानी व नई सोच के साथ आपसी अहं की टकराहट थी। "रूढ़ियां के घटाटोप में ढका हुआ समाज विशेष का, नारी जाति की घुटन बेबसी और मुक्ति की छटपटाहट का, जैसा चित्रण इस कहानी में हुआ है अन्यत्र दुर्लभ है।"[297] इस संग्रह के विषय में नासिरा जी का कहना है– "मेरी ये कहानियाँ दुःख और मुजरां के सुख का मोहभंग करती हुई एक ऐसी गली की सैर कराती हैं जो पत्थर की गली है। इस पत्थर की गली में रहने वाले अपने निकास के लिये छटपटाते पत्थर से टकराकर लहूलुहान हो उठते है।"[298]

संगसार कहानी संग्रह में कई कहानियाँ ऐसी है जो स्त्री की बुनियादी अस्मिता की दास्तान है। है। संगसार कहानी की 'आसिया' प्रेम की पवित्रता का सच्चा नमूना है। पति के साथ बेवफाई के बावजूद उसके विवाहेत्तर प्रेम–सम्बन्ध में जुदाई है। उसे कोर्ट द्वारा संगसार करने के सजा सुनायी भी गयी है। "उस रात

---

[296] नासिरा शर्मा, मेरे जीवन पर किसी के हस्ताक्षर नहीं, पृ0सं0 12।

[297] डा0 नीलम शर्मा, मुस्लिम कथाकारों का हिन्दी योगदान, पृ0सं0 86।

[298] नासिरा शर्मा, पत्थरगली, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण– 2011 पृ0सं0 65

औरतों ने चूल्हें नहीं जलाए, मर्दो ने खाना नहीं खाया, सब एक दूसरे से आँख चुराते है। यदि आसिया गुनाहगार है तो उसके संगसार होने पर यह दर्द, यह कसक उनके दिलों कों क्यों मथ रही थी।''[299] गूंगा आसमान कहानी की 'मेहरअंगीज' अपने लंपट लेकिन सत्तापोश पति के चंगुल से तीन जवान स्त्रियों को छुटकारा दिलवाती है। यहाँ एक स्त्री के चारित्रिक बहादुरी का सहज चित्रण हैं। दरवाज–ए–कजविन की 'मरियम' ऐसी औरत है जो समाज की सड़ी–गली रस्मों का शिकार है। मरियम की नियति यही हैं। वह पूछती है– "क्या बदलाव इसलिये चाहते थे ? हमारा गुनाह क्या था? क्या इस बदलाव के बावजूद स्त्री की स्थिति जस की तस है कि उसका शोषण मानसिक और शारीरिक स्तर पर लगातार होता रहे? उसकी हालत कमतर बनी रहे। ये कहानी औरत की मजबूरी की त्रासद दास्तान है।''[300] नमक का घर कहानी की 'शहरबानां' अपने खोए घर और गुमशुदा परिवार की त्रासदी झेलती औरत खुदा की वापसी संग्रह की कई कहानियों में दु:खियारी नायिकाएं विभिन्न कारणों से पति को छोड़कर भाई, माँ, पिता, के घर आश्रय लेने के लिये मजबूर हो जाती हैं।

नासिरा जी ने अपने आस–पड़ोस में इस माहौल को महसूस किया और इसे अपनी लेखनी से कहानियों में उकेरा है। इस संग्रह की अधिकांश कहानियॉ विभिन्न वर्गो की स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती है। मेरा घर कहाँ में लाली धोबन की बेटी 'सोना' हो या नई हुकूमत की 'हजारा' या बचाव की नायिका 'रेहाना' हर कहानी में नारी–संघर्ष और उत्पीड़न का जीता–जागता उदाहरण मौजूद है। चार बहनें शीशमहल की में शरीफ के घर में लड़की का पैदा होना अपशगुन माना जाता है बाहर दुकान पर चूड़ी पहनाते हुये लड़की के जख्मी हाथ देख शरीफ का दिल भी जख्मी हो जाता है। जिन औरतों व लड़कियों की बदौलत उसकी जिंदगी की गाड़ी चल रही है, रोटी नसीब हो रही है। उसी के घर में लड़की का पैदा होना मनहूसियत की बात हैं। बुतखाना कहानी संग्रह की कहानी अपनी कोख भ्रूण परीक्षण पर लिखी गयी कहानी है। स्त्री की स्वायत्ता, उसके वजूद व आत्मनिर्भरता

---

[299] नासिरा शर्मा, संगसार, वाणी प्रकाशन, दिल्ली संस्करण– 2009 पृ0सं0 15

[300] नासिरा शर्मा, संगसार, वाणी प्रकाशन, दिल्ली संस्करण– 2009 पृ0सं0 16

की कहानी है। इसकी नायिका 'साधना' विवाह के उपरान्त दो बच्चियों की माँ बन जाती है। तीसरी बार उससे अपेक्षा की जाती है कि भ्रूण परीक्षण में यदि इस बार भी पुत्री हो तो गर्भपात करा लें। गर्भ में पुत्र होने पर भी वह यह सोचकर वह गर्भपात करा देती है, कि पुत्र होने पर उसकी पुत्रियों के साथ भेदभाव बढ़ जाएगा। ये कहानी एक अनकहा सत्य है। शाल्मली उपन्यास में स्त्री का शोषण, भेदभाव, अत्याचार, पत्नी की सफलता के कारण पति में कुंठा भाव, वैवाहिक औपचारिकता की अभिव्यक्ति है। "इसमें परंपरागत नायिका नहीं है, बल्कि वह अपनी मौजूदगी से यह अहसास जगाती है कि परिस्थितियों के साथ व्यक्ति का सरोकार चाहे जितना गहरा हो, पर उसे तोड़ दिए जाने के प्रति मौन स्वीकार नहीं होना चाहिए।"[301] ठीकरे की मंगनी उपन्यास की नायिका 'महरूख' शाल्मली की तरह धीर, गम्भीर एवं आत्म–निर्भर नारी है। वह समाज के बन्धनों के कारण घुटन भरा जीवन व्यतीत करती हुई, आत्मसमर्पण नहीं करती अपितु विपरीत दिशा में उसका सामना भी करती हैं।

नासिरा शर्मा का 'ईरान की खूनी क्रान्ति' पर लिखा, बहुचर्चित उपन्यास सात नदियाँ एक समन्दर सात महिलाओं को केन्द्र में रखकर लिखा गया उपन्यास उनके साझे दर्द को बयान करता है। फैज ने कहा है–बड़ा है दर्द का रिश्ता ये दिल गरीब सही। तुम्हारे नाम पर आयेंगे गम–गुसार चले। यहीं से दर्द फैलता है पूरी कायनात पर छा जाता है। 'ईरानी क्रान्ति' में जनता पर होने वाले अत्याचारों का संवेदनशील चित्रण सात महिलाओं के साथ किया। नासिरा जी ने इस उपन्यास के लिए लिखा– "मेरे इस उपन्यास में इन्सान की आरजू, तमन्ना और इच्छा से भरे अधूरे सपनों का बयान है। जो किसी भी व्यक्ति की निजी धरोहर हो सकता है।"[302]

कोई भी युद्ध हो, क्रान्ति हो, उससे सबसे ज्यादा प्रभावित स्त्रियाँ ही होती हैं, सबसे अधिक पीड़ा, यंत्रणा स्त्री को ही झेलनी पड़ती है। उपन्यास, कहानी संग्रह के अलावा इनका 2003 में लेख–संग्रह औरत के लिए औरत प्रकाशित हुआ। जिसमें आपने पूरी संवेदनशीलता और आत्मीयता के साथ ना केवल देश वरन विदेश तक

---

[301] नासिरा शर्मा, शाल्मली, किताबघर, प्रकाशन, नई दिल्ली, सं0–2013

[302] नासिरा शर्मा, सात नदियाँ एक समन्दर, संस्करण–2013 पृ0सं0 18।

की औरतों की समस्याओं को दिशाबद्ध करने का प्रयास किया है। इन्होंने जाग्रत होती स्त्री चेतना में आंधियाँ ही नहीं भरी बल्कि बुद्धिमत्ता से नए रास्ते बनाने का जोश भी भरा। इनकी खुली मानसिकता, सन्तुलित दृष्टि बार–बार स्पष्ट करती हैं, कि मनोमस्तिष्क चेतना और शक्ति में औरत कमतर नहीं है। अपनी पुस्तक के हर लेख में इन्हांने स्वस्थ सम्बन्धों पर जोर दिया है। ''समाज सिर्फ मर्दो द्वारा नहीं बना, बल्कि इसके ताने–बाने में मर्द तथा औरत दोनों का वजूद है, ...मर्द और औरत एक चने की दो दाल हैं, अर्थात दोनों इंसान का रूप हैं।''[303] नासिरा जी ने औरतों की जिंदगी की एक–एक बारीकियों को उनके परिवार के सदस्य की तरह देखा, उनके भरोसे को जीता है। त्रासद पीड़ा झेलती बेबस स्त्रियाँ ममत्व भाव व आत्मीयता में जीती है, और उनसे मुक्त होने का साहस भी नहीं कर पातीं। नासिरा जी लिखती हैं– ''जिन कुरीतियों एवं परंपरा से भारत मुक्त था, वही आज की मुख्य समस्या बन चुकी हैं, जैसे बंधुऑ मजदूरी, इत्यादि लाख कानून बने मगर उसका पालन अभी पूरी तरह नहीं हो रहा है। उसी तरह महिलाओं के प्रति बने कानून, फाइलों की शोभा अवश्य बन चुके हैं। मगर समाज का दृष्टिकोण अधिक पुरातनपंथी बन गया।''[304]

नासिरा शर्मा का कहानी संसार मुख्यतः नारी के प्रति असमानताओं एवं उसके अस्तित्व की रक्षा के लिये लड़ा जा रहा अनवरत युद्व है। इनकी कहानियॉ अपने घर की तहजीब व समाज के अंधेरे को दूर करती वे शमाएँ हैं जिसकी रोशनी इतिहास के पन्नों तक फैली हुई है। ये कहानियाँ केवल कहने सुनने तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि अतीत व वर्तमान के तारीखी दस्तावेज हैं जिनकों पढ़ा व समझा जा सके। इनकी कहानियाँ में 'नारी' की जिंदगी का महाकाव्य है। नासिरा शर्मा स्त्री विमर्श की प्रमुख कथाकार हैं।

स्त्री विमर्श इसलिए प्रासंगिक है कि इन्होंने महिलाओं के हितों की चर्चा करते हुए, स्त्री के बहाने मानवीय सवालों से रूबरू कराया। इनकी कहानियों में नैतिकता, ईमानदारी और तहजीब की महीन बुनावट है। इन्होंने अपनी रचनाओं में

---

[303] नासिरा शर्मा, औरत के लिए औरत, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, सं0–2002, पृ0सं0 86

[304] नासिरा शर्मा, किताब के बहाने, सं0 2001, पृ0सं0 163

नारी मन को जबरदस्त तरीके से उकेरा है। नासिरा जी इस्लाम धर्म के आधार पर नारी सशक्तीकरण के साथ–साथ भारतीय मुस्लिम परिवारों की त्रासदी की कहानियों को रेखांकित करती हैं। साथ ही मुस्लिम स्त्री अधिकार के प्रत्येक पक्ष का उद्घाटन भी करती हैं। इनकी कहानी की नायिका रोती नहीं, अकेले में भी नहीं।

वहीं प्रभा खेतान की नायिका 'आओ पेपे घरे चलें' में कहती हैं– ''औरत कब रोती और कहाँ नहीं रोती। जितना वह रोती है, और उतनी ही औरत होती जाती है।''[305] दोनों की नायिकाओं में इतना फर्क है कि समाज एक अकेली किंकर्तव्यविमूढ़ औरत को रोते देखना चाहता है। इसलिए वह उसे तरह–तरह से रुलाता हैं। रोते चले जाने का संस्कार देता है। वहीं एक शिक्षित परिपक्व स्त्री स्वाभिमान की मनोदशा में किसी का कंधा नहीं तलाशती। समता एवं स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर अपने पैरों पर खड़ी होने का साहस करती है। उसे अपनी अस्मिता का बोध है, जिसकी रक्षा करने में वह सक्षम है। यश मालवीय के शब्दों में ''नासिरा शर्मा के कथासाहित्य में औरत आँचल में दूध और आँखों में पानी वाली औरत नहीं है। वह पितृसत्तात्मक समाज के सामने सीना तानकर खड़ी हो जाती है, प्रतिरोध के स्वर मुखरित करने लगती है। इन कहानियों को पढ़कर नींद नहीं आती बल्कि आई हुई नींद कई–कई रातों के लिए उड़ जाती है।''[306]

सामाजिक विडम्बनाएँ

नासिरा शर्मा ने अपनी रचनाओं में मुस्लिम समाज की पारिवारिक एवं सामाजिक विडम्बनाओं को दर्शाया है। उसका मुख्य कारण परिवारों में संस्कारों का हनन, समाज में शिक्षा प्रभाव, विखंडित विचारधारा, मुस्लिम समाज में बेहद पिछड़ापन, समसामयिक जीवन जीने की शैली, संस्कारों में उथल–पुथल है। इन सभी का प्रभाव सामाजिक संस्कृति और यथार्थ पर पड़ता है। यदि व्यवहारिक दृष्टि से देखा जाए तो स्त्रियों की दशा में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं हुआ है।

''भारतीय समाज बाल–विवाह की विकृतियों से तो ग्रस्त है ही, यह प्रवृत्ति मुस्लिम समाज में भी दृष्टिगत होती है। मुस्लिम समाज के विशेष संदर्भ में द्रष्टव्य

---

[305] खेतान, प्रभा–उपनिवेश में स्त्री–प्रभा खेतान, राजकमल प्रकाशन, 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली। पृ0सं0 251

[306] वहीं, 163

यह भी है कि आपस में वैवाहिक सम्बन्धों को परम्परा के कारण अक्सर बचपन में ही बाल–विवाह से भी भयावह सिद्ध होती है। कई प्रकार की समस्याएँ सामने आती हैं। लड़की और लड़के के मध्य संस्कारवश मनोवैज्ञानिक धरातल पर स्वाभाविक रूप से लगाव की कोमल भावना उत्पन्न हो जाती है, लेकिन यह आवश्यक नहीं कि युवा होने के बाद दोनों की जीवनधाराएँ वैसी ही हों, जैसी कि उनके अभिभावकों की रही हों या फिर उनकी कल्पनाएँ रही हों।''[307]

नासिरा शर्मा ने नारी जीवन को अब अविश्वसनीय, आश्चर्य मिश्रित विचारधारा पर उद्वलित किया है। जहाँ फव्वारे लहू रोते हैं' उसमें ईरानी संस्कृति को दर्शाया है। ईरान इस्लाम संस्कृति का मिला जुला देश है, जिसका अपना इतिहास संस्कृति और साहित्य का वृहद स्वरूप है।

''ईरान मुझे जुर्दश्ती एवं इस्लाम संस्कृति का मिला–जुला देश लगने लगा था। आतशकदें ठंडे होने के बावजूद वहाँ पर कुरूश महान् का महत्व था। उनके यहाँ 'नौ रोज' का जश्न ठीक होली की तरह मनाया जाता था। उनकी शबेरात हमारी दीवाली की तरह थी। धर्म में भी एक दर्शन एवं खुलापन था। तेहरान में और मशहद में दो पवित्र स्थानों पर जाने का मौका मिला। वहाँ की कशीदाकारी देखकर दंग रह गई। कला एवं वास्तुशिल्प का संगम बड़ा ही लुभावना था। नीली कशीदाकारी का काम पूरे ईरान मे था और यह जानकर मुझे बहुत ताज्जुब हुआ कि हमारे यहाँ ईरान की पहली यात्रा मेरे कितने भ्रम तोड़ बैठी, मेरे जीवन में ईरान शब्द का कोई महत्व नहीं था। उसका वजूद मेरे लिए विश्व नक्शे पर केवल एक राष्ट्र के रूप में था मगर दो माह बीस दिन रहने के बाद वह महसूस हुआ कि यदि मैं ईरान न देखती तो कोमलता का यह रूप मुझसे अनदेखा छूट जाता, जहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य है, लोगों का निश्छल प्रेम एवं तारीख, साहित्य का एक सांझा सेतु जिस पर जाने कब से आना जाना जारी है, फर्क सिर्फ इतना है कि इस बार की यात्रा में शामिल थी। अगली बार कब आना होगा, कह नहीं सकती।''[308]

नासिरा शर्मा ने अपने कहानियों और उपन्यासों में जीवन को हकीकत और

---

[307] शुक्ल ललित, नासिरा शर्मा शब्द और संवेदना मनोभूमि, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2012, पृ.54–55

[308] नासिरा शर्मा, सात नदियॉ एक समन्दर। वाणी प्रकाशन, संस्करण–2013 पृ. 60

यथार्थ से परिचय कराया है, जिसमें विभिन्न वर्ग, उनकी चुनौती और संभावनाएँ, उनकी संस्कृति, स्वरूप, चेतना एवं विविधता को उद्बोधित किया है। जीवन की कई संकीर्णताएँ, परिस्थितियाँ जो सांस्कृतिक चेतना से जुड़ी हुई हैं। उनकी बड़ी उपलब्धियों को सांस्कृतिक चिंतन एवं संवेदना से लेखबद्ध एवं संस्कृति बद्ध किया है। नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में पाई जाने वाली सामाजिक विडम्बनाओं को विभिन्न उप समीक्षाओं में बाँटा गया है।

यौन शोषण की विडंबनाएँ

यौन शोषण, बलात्कार की परंपरा तभी से चल रही है, जब से पुरुष प्रधान समाज शक्तिशाली बना, यानि पितृसत्ताक सत्ता चलन में आयी। अर्चना वर्मा के अनुसार–''पितृसत्तात्मक समाज का नैतिकताबोध का यह मर्मस्थल है। स्त्री की देह और उस पर दखल। किसी भी कोटि का पुरुष यही मानना चाहता है कि बलात्कार के द्वारा स्त्री को तोड़ा जा सकता है। बड़े पैमाने पर सामान्यतः स्त्री समुदाय के बारे में जो अभी पुरुष के चंगुल के बाहर नहीं है।''[309]

'सात नदियाँ और एक समंदर' की नायिका तैय्यबा वर्तमान सत्ता की विरोधी है। अतः उसे कैदखाने में तरह–तरह यातनाएँ दी जाती हैं। तैय्यबा की तरह कई युवतियाँ इस त्रासदी को भोगने के लिए विवश थीं।

'शाल्मली' उपन्यास में शाल्मली का पति उसकी इच्छा के विरुद्ध उसके साथ जबर्दस्ती करने का प्रयास करता है–मुझे यहाँ भी अपना अधिकार लेना आता है। प्रेम से या बल से, जिस तरह मैं चाहूँगा तुम्हारा रूठना, तुम्हारा अकड़ना व्यर्थ है। नरेश ने व्यंग्य से कहा–तुम जानना चाहोगी पुरुष की दृष्टि में औरत क्या है? भोगने की वस्तु............वही उसकी पहचान है। इसलिए तुम औरत की तरह रहो, इसी में तुम्हारा उद्धार है और इस घर का कल्याण और गृहस्थी का सुख।'ठीकरे की मँगनी' उपन्यास में महरुख का दोस्त रवि उसके अकेलेपन का फायदा उठाने की कोशिश करता है, परन्तु महरुख वहाँ से बचकर निकल लेती है।

रमणिका गुप्ता लिखती हैं–''औरत को पुरुष की संपत्ति होने की अवधारणा के चलते ही उससे बलात्कार कर पुरुष दूसरे पुरुष से बदला लेता है। यानी औरत

---

[309] कृष्णकांत, सुमन–इक्कीसवीं सदी की ओर, राजकमल प्रकाशन, 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली। 2001 पृ.24

की इज्जत जो यौन–शुचिता में सीमित पुरुष संपत्ति मानी जाती है, अर्थात् औरत की अपनी इज्जत की कोई अवधारणा ही नहीं है।'[310]

'प्रोफेशनल वाइफ' कहानी की बनी बचपन में अपने नौकर और कजिन के वासना का शिकार होती है। फिल्म निर्माण क्षेत्र से जुड़ी महिला बनी को भावनात्मक रूप से शोषित कर विजय उसके साथ यौन सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। एक जगह बनी पूर्णतया आहत है और वह कहती है–नहीं, इस मामले में जहाँ तक मेरा सवाल है मैं बिल्कुल क्लीयर हूँ, कई बार मैंने अपने को टटोला भी मगर ऐसा नहीं है। मेरे जिस्म में न सेक्स की चाहत बची है और न ही मुझे किसी से प्यार हो सकता है। मेरे साथ एक दो बार नहीं बल्कि कई बार मेरा बलात्कार हुआ है। मैं अंदर से टूटी हुई हूँ। सर बहुत चाहते हैं, मुझसे शारीरिक सम्बन्धों स्थापित करना, मगर मुझमें उमंग नहीं जागती है।

'तीसरा मोर्चा' कश्मीर के बिगड़े हालात पर सवाल खड़ा करती है। इस कहानी में दो बच्चों की माँ के साथ कुछ वहशी बलात्कार करते हैं। हिंदू–मुसलमान के दो मोर्चों से अलग स्त्री जाति के रूप में तीसरे मोर्चे की बात रखती है। ''मैं एक औरत हूँ और औरत की अस्मिता तो हिंदू–मुसलमान नहीं होती। हिंदू–मुसलमान तो सिर्फ वह मर्द होते हैं, जो अपने मजहब के उन्माद में औरत की आबरू लूटकर अपना धर्म निभाते हैं।'[311]

'बिलाव' एक माँ की बड़ी दर्दनाक कथा है, जो हमें अंदर तक झकझोर कर रख देती है। सोनामाटी की दोनों बेटियों के साथ बलात्कार होता है। उसकी बड़ी बेटी मैना के साथ उसका पिता शराब के नशे में उसे अपनी वासना का शिकार बनाता है और छोटी बेटी हीरा के साथ भी एक पड़ोसी बलात्कार करता है।

इस प्रकार नासिरा शर्मा ने अपने साहित्य में बलात्कार की शिकार स्त्री की जटिल त्रासदी को व्यक्त किया है।

विधवा जीवन की विडंबनाएँ

विधवा जीवन बड़ा कष्टमय होता है और हमारे समाज द्वारा विधवाओं पर

---

[310] रमणिका गुप्ता–स्त्री विमर्श : कलम और कुदाल के बहाने, पृष्ठ–44

[311] नासिरा शर्मा–औरतः अस्तित्व और अस्मिता, पृष्ठ–53

अनेक बंधन लाद दिये जाते हैं।'कुइयाँजान' उपन्यास में खुरशीदआरा अपनी शादी के सात साल बाद विधवा हो जाती है। उसके पति जमीन अब्बास शहीद हो जाते हैं। खुरशीदआरा को दो बेटों की मौत का सामना भी करना पड़ता है। पति की मृत्यु के बाद खुरशीदआरा बड़ी दिक्कतों से अपने ननद और देवरों को पालती है। उनकी शादी करती है। खुरशीदआरा धीरे–धीरे अपने अकेलेपन से टूटती जा रही थी।

'शामी कागज' नासिरा शर्मा की बड़ी दर्दभरी कहानी है। पाशा के पति मोहसिन की एक ऐक्सीडेंट में मृत्यु हो जाती है। पाशा को जब यह बात पता चलती है तो वह पत्थर सी बन जाती है। पाशा सोच रही थी–

"रोज उसके गम के सहारे से गुजरने वाले ऐसे कितने कारवाँ आते हैं, जिनके बीच वह यादों की आँधियों के तूफानी थपेड़ों में डगमगाती एकांत के लिए भटकती रहती है कि काश! इन रेत के बवंडरों के बीच उसको अपने कमरे का शांत कोना नसीब हो जाए, जहाँ वह मोहसिन के कपड़ों से उठती लपटों की खुशबू के बादलों में डूब जाए और यादों के काफिले पर बैठी वह सारे बीते दिनों के फासले तय कर डाले। मगर जब यूँ बीच में ही मोहसिन ने अपनी साँसों को समेटकर उसकी जिंदगी के हिसाब को ही गलत कर दिया था।'[312]

'दीमक' एक ऐसी विधवा औरत की कहानी है, जिसने अपने शौहर के साथ–साथ पाँच बेटों की लाशों को देखा। इन्हीं की वजह से अब वह मोहल्ले की मुबारक औरत नहीं, बल्कि मौत के सायों में मँडराती मनहूस औरत हो गई थी। अंततः वह अपने दुखों से पीड़ित अपने प्राण त्याग देती है।'उड़ान की शर्त' और'बचाव' कहानी में महशी और बदली दोनों के पति की मृत्यु हो जाने पर विधवा जीवन जीते हुए उनके ससुराल वाले संपत्ति का अधिकार नहीं देते हैं। अतः उन्हें अपने मायके लौटने के लिए विवश करते हैं।

वेश्या जीवन की विडंबनाएँ

केवल वासनात्मक तृप्ति के लिए कोई स्त्री वेश्या नहीं बन जाती, उसके पीछे अनेक कारण होते हैं। पारिवारिक समस्याएँ, पति के साथ झगड़े तथा उसका

---

[312] नासिरा शर्मा–शामी कागज, सत्साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–1997 पृष्ठ–35

दुर्व्यवहार, विवाहपूर्व स्थापित अवैध सम्बन्ध, किसी प्रेमी द्वारा विश्वासघात, आदि अनेक ऐसे कारण हैं जो नारी को वेश्यालय पहुँचा देते हैं।

'मटमैला पानी' कहानी में सत्रह साल की फुलवा जो एक बच्चे की माँ है, पति की मृत्यु ने गाँव छोड़ने पर मजबूर कर दिया। शहर पहुँचकर उसे वेश्यावृत्ति के दलदल में जबर्दस्ती पटक दिया जाता है। बेटे के बड़े होने के कारण वह ग्राहकों के साथ बाहर जाने लगी थी।

'दरदवाजा–ए–कजविन' कहानी स्त्री जीवन की विवशता का दस्तावेज़ है। इसकी नायिका मरियम अपने पति माजिद की उपेक्षा के कारण जिजीविषा हेतु वेश्या जीवन जीने के लिए बाध्य हो जाती है। माजिद विदाई से पूर्व मरियम का कौमार्य भंग करता है। सुहागरात के पश्चात जब परिवार के सदस्यों को यह ज्ञात होता है कि बहू कुँवारी नहीं थी, घर में मातम छा जाता है, परन्तु माजिद मौन रहता है। परिस्थितिवश मरियम वेश्या जीवन जीने के लिए विवश हो जाती है।

'आखिरी पहर' कहानी की जाहेदा बाल विधवा है। उसकी सास उसका दूसरा निकाह हसन नामक युवक से करवाती है। हसन एक स्कूल में शिक्षक है, परन्तु वह सत्ता का विरोधी समझकर मारा जाता है। कालान्तर में जाहेदा एक इन्सपेक्टर की रखैल बनने पर मजबूर हो जाती है।

तलाक

पारिवारिक कलह के चलते पति–पत्नी कई बार एक दूसरे को त्याग देते हैं। ऐसे में दोनों के सामने एक ही मार्ग दिखाई देता है–'तलाक'।'जहाँनुमा' कहानी में नबीला और कमाल दोनों क्रांतिकारी विचारों के होने के कारण विवाह कर लेते हैं और आगे इनकी बन नहीं पाती। इस कहानी में तलाक की समस्या पर डॉ0 ज्योति सिंह लिखती हैं–''कमाल और नबीला दरकते रिश्तों की कथा को व्यक्त करते हैं। बरसों पहले मजदूर युनियन के लिए संघर्ष करते–करते दोनों नजदीक आते हैं। समय की तेज रफ्तार कमाल को बहा ले जाती है। संघर्ष उसे अर्थहीन लगते हैं। आरामदेह जिंदगी की तलाश में नबीला को तलाक देकर वह किसी अमीरजादी से विवाह कर लेता है। दौलत, इज्जत, बीबी, बच्चे इन सबके बावजूद उसके भीतर का इंसान सुकून चाहता है, जो उसे अपने परिवार से नहीं मिल सका, क्योंकि..................

.....मैं एक पुरानी चीज ठहरा, जो उसके लिए कोई महत्त्व नहीं रखता।'[313]

'उड़ान की शर्त' कहानी में महशी और तालिब दोनों कलमकार हैं। प्यार होता है। शादी भी करते हैं। दोनों की यह दूसरी शादी है। महशी का पति और तालिब की पत्नी दोनों मर चुके हैं। पहले विवाह से दोनों को एक–एक संतान हैं। महशी की पुरानी जिंदगी और वर्तमान की कुछ घटनाओं की वजह से वे साथ नहीं रह पाते। महशी का भाई दोनों को विभक्त करने में प्रमुख भूमिका निभाता है।'सात नदियाँ एक समंदर' उपन्यास में'सूसन' का तलाक हो जाता है, क्योंकि उसके पति असद का उसकी फर्म में काम करने वाली स्त्री से सम्बन्ध रहता है।

'इब्ने मरियम' कहानी भोपाल में हुई गैस दुर्घटना के कारण ताहिर और रामधन की पुत्रियों को उनके ससुराल वालों ने छोड़ दिया। ताहिर की पुत्री सुगरा को उसके ससुरालवाले नहीं ले जाते। ताहिर के समधी कहते हैं–''इस जवानी के चलते हमें अपनी नस्ल तो खराब करनी नहीं है। लूली, लंगड़ी, कानी–कुतरी, औलादें पैदा हुईं, तो सिवाय भीख माँगने के उनसे और कौन सा काम हो पाएगा आखिर?..................हिरोशिमा के बम के बारे में भूल गए....................। यह खुदा के भरोसे का नहीं, साइंस के करिश्मों का नतीजा है, जो औरतों के आधे–आधे पेट इसी भोपाल में गिरे हैं।'[314]

'दादगाह' कहानी में तेहरान कोर्ट में अकबर तेहरांची पिछले दस साल से हैं? मगर'हिमायते खानवादेह' के मामलों को जज के रूप में पिछले तीन वर्षों से देख रहे हैं। उनके सामने तलाक के कई मामले आते हैं। कमरा नं0–47 में अली रजा बैठे हैं। तलाक का फार्म खानम मरजिया की तरफ से है। उम्र 21 वर्ष। खानम मरजिया दुःख की पराकाष्ठा से मुट्ठियाँ अपनी जाँघों पर मारकर दुःख और झुँझलाहट के स्वर में कहती है–''वकील साहब, मैं औरत नहीं केवल जूस निकालने की मशीन बनकर रह गई हूँ। नहीं जानती कि पति–पत्नी का क्या सम्बन्धों होता है?... कि मेरे पति और मुझमें जमीन आसमान फर्क है। मुझे निजात चाहिए................ ।'[315] उसी गैलरी के रूम नं0–18 में मिस्टर नखई अपने सामने बैठी औरत को देख

[313] नासिरा शर्मा–शब्द और संवेदना की मनोभमि, पृष्ठ–84

[314] नासिरा शर्मा–इब्ने मरियम, किताबघर प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–2011 पृष्ठ–65

[315] नासिरा शर्मा–इंसानी नस्ल, प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, संस्करण–2015 पृष्ठ–96

रहे हैं और उसका पति उनसे कह रहा है–''कुछ भी कीजिए किसी तरह आज अभी इसी समय मुझे मुक्तिनामा दे दें। मुझे तलाक का कागज देकर मुझे बचा लीजिए, वरना मैं पागल हो जाऊँगा। आप जो कहे, मैं करने को तैयार हूँ।'[316] कमरा नं0–59 से एक औरत की रुँधी आवाज उभर रही थी–'मेरी शादी को छः साल हो गए। शादी मेरी पसंद और माँ–बाप की मर्जी के खिलाफ हुई थी। शादी के मास भर बाद ही हमारे बीच तकरारें शुरू हो गई थीं। एक दिन ऑफिस से लौटे और बोले, 'जल्दी काले कपड़े पहनकर तैयार हो जाओ। हमें दोस्त के पिता की मौत में जाना है। मैं, लड़ाई न हो, इस डर से तैयार हो गई। वहाँ पर मैं रोने को मजबूर हुई, फिर तो यह सिलसिला चल पड़ा कि ये पार्टी और दावों में जाते और मैं जबर्दस्ती मौत के घर में ले जाई जाती, जहाँ मेरी उदासी देखकर यह मन ही मन हँसते?'[317]

नासिरा शर्मा लिखती हैं–''तलाक शब्द कभी हथौड़े की तरह औरत की जिंदगी पर इस तरह टूटता था कि उसकी आँखों के आगे अँधेरा छा जाता था। उसकी बाकी जिंदगी सामाजिक प्रताड़ना सहने और जीने के संघर्ष में गुजर जाती थी। यह शब्द तब शाप था, लानत था, मगर अब मुक्ति का मंत्र है। मरने से बचने का उपाय है। संघर्षरत गृहस्थी से बिना कारण होम हो जाने से निजात का रास्ता है।'[318]

भ्रूण परीक्षण

भ्रूण परीक्षण कालांतर की एक बड़ी समस्या है। बेटे की चाह में बेटियों के अंश को भ्रूण परीक्षण के द्वारा उन्हें खत्म कर दिया जाता है। संदीप और साधना के रूप में लेखिका ने'अपनी कोख' कहानी के माध्यम से भ्रूण हत्या की समस्या को उठाया है। ''साधना ने पिछले दिनों से घर में तूफान मचा रखा था। सबको डर था कि वह मेंहदी भी लगवाएगी या नहीं। घूँघट काढ़ना, नथ पहनना तो दूर की बात थी।............साड़ी उसने उतार फेंकी और पीली सलवार–जंपर पहन, सिर पर पीली चुन्नी का पल्लू डाल लिया। हर काम चुपचाप सिर झुकाकर कर रही थी। जैसे

---

[316] अर्चना वर्मा–हंस, अंक–2005, पृष्ठ–63

[317] नासिरा शर्मा–सात नदियाँ एक समंदर, संस्करण–2013 पृष्ठ–282

[318] रमणिका गुप्ता–स्त्री विमर्श : कलम और कुदाल के बहाने, पृष्ठ–44

अपने आप से समझौता कर लिया हो कि अब शादी का विरोध करना बेकार है। लड़की पैदा हुई है, तो ब्याही तो जाएगी। चाहे उसके अरमान आगे पढ़ने के हों, नौकरी करने के हों या फिर अकेले रहने के हों।'[319] परन्तु विवाह के उपरान्त उसके सारे अरमान जर्जर भवन के भूकंप के एक झटके में ताश के पत्ते की भाँति भरभराकर गिरने के समान धराशायी हो गए। वह एक मीठी साजिश में घिरती चली गई। शादी के कुछ समय बाद साधना गर्भवती हो जाती है। वह गर्भपात कराना चाहती है, क्योंकि एम0ए0 फाइनल की परीक्षा है। परन्तु संदीप बच्चा चाहता है। पुत्री ने साधना की कोख से जन्म लिया। पहली पुत्री के छः महीने बाद साधना फिर से गर्भवती हो जाती है। पति के मना करने के बावजूद उसकी सास भ्रूण परीक्षण करवाती है, जिससे पता चलता है कि साधना की कोख में फिर से पुत्री है। इस जानकारी के मिलते ही साधना की सास का रवैया बदल जाता है। वह चाहती है कि साधना इस बच्ची को गिरवा दे। सास के लाख दबाव के बावजूद साधना ये भ्रूण हत्या नहीं होने देती और एक बिटिया को और जन्म देती है। एक बार फिर साधना की कोख में तीसरा बच्चा आता है। उसे भ्रूण परीक्षा ये गर्भ में लड़का होने का पता चल चुका था, पर वह एबार्शन करा लेती है।'यह लड़का यदि पैदा हुआ तो मेरी दोनों लड़कियों को निगल जाएगा। उसके आगे सास बेटियों से बर्ताव ठीक नहीं रखेंगी और क्या पता संदीप भी बेटा पाकर बदल जाए।

डॉ0 अमरीश सिन्हा लिखते हैं–''अपनी कोख' में लेखिका ने स्त्री के अधिकार के रूप में गर्भपात को उचित ठहराया है तथापि उसने साथ ही साथ भ्रूण हत्या नहीं भी होने दिया। दोनों कृत्य अलग–अलग परिप्रेक्ष्य में होते हुए एक निष्पत्ति को दर्शाते हैं कि अपनी कोख पर स्त्री का हक है। उसे कोई और संचालित नहीं कर सकता एवं भ्रूण हत्या लड़की की है, क्यों जायज है। समाज में स्त्री–पुरुष सिर्फ जैविक दृष्टि से भिन्न हैं। अन्यथा उनकें कोई भेद नहीं।'[320]

2. सामाजिकता

आधुनिक युग का जैसे–जैसे विकास हो रहा है वैसे ही वातावरण के

---

[319] नासिरा शर्मा–दूसरा ताजमहल (कहानी संग्रह), इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण–2015 पृष्ठ–157

[320] डॉ0 अमरीश सिन्हा (संपा0)–हिंदी विशाल शब्द सागर, दसवाँ भाग संस्करण–2015, पृष्ठ–49

साथ–साथ परिस्थितियाँ भी बहुत तेजी से बदल रही हैं। इसी कारण मनुष्यों में भौतिक सुख प्राप्त करने की इच्छा बड़ी प्रबल हो रही है। समाज में नवीन आविष्कारों ने मुनष्य के जीवन को अधिक खुशहाल बना दिया है और इस भौतिक सुख को प्राप्त करने की मानसिक प्रवृति प्रत्येक स्त्री–पुरुष में पनप रही है। इसी कारण प्रत्येक मनुष्य में इस सामाजिक व्यवस्था के प्रति अधिक सजगता दिखाई देती है और इसी कारण उनमें दूषित व्यवस्था के प्रति विद्रोहात्मक मनोवृति पनपती है। समकालीन मनुष्य सब कुछ अपने स्वयं के लिए करना चाहता है, वह समाज के लिए कुछ भी नहीं करना चाहता। इसी कारण आधुनिक साहित्य जीवन के यथार्थ को व्यक्त करता है लेकिन यह साथ–साथ मनुष्य के अस्मिता–संकट को भी प्रगट करता है इसी कारण व्यापक स्तर पर मूल्य संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं। ऐसी मानसिकता के कारण मनुष्य सामाजिक अव्यवस्था के प्रति विद्रोह प्रगट करते हैं और इस विघटित होते मूल्यों में सुधार लाना चाहते हैं अन्यथा वह परम्परावादी अव्यवस्था के प्रति विद्रोही हो जाते हैं। कुछ समस्याओं पर जो समाज में पनप रही हैं जैसे–दलित कथा–साहित्य, व्यंग्य कथा–साहित्य, देश विभाजन, संप्रदायिकता, नारी की दयनीय स्थिति आदि इन सभी सामाजिक परिस्थितियों का अवलोकन साहित्यकार अपने साहित्य में कर रहे हैं। आजकल उपन्यासों में इन विघटित होते सामाजिक मूल्यों का चित्रण किया जाता रहा है।

नासिरा शर्मा ने भी मनोवैज्ञानिक अध्ययन के आधार पर ऐसी परिस्थितियों का चित्रण अपने उपन्यास साहित्य में किया है। नासिरा शर्मा ने मनोवैज्ञानिक अध्ययन के आधार पर सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, राजनैतिक और वैयक्तिक परिस्थितियों का चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। इस बदलते हुए वातावरण में बहुत सारे परिवर्तन हो रहे हैं जिसके कारण हमारे जीवन–मूल्य भी बदलते जा रहे हैं। भारतीय समाज विभिन्न कारणों से बदल रहा है ''औद्योगिकरण, शहरीकरण, शिक्षा का प्रसार, सामाजिक संघर्ष, जनसंचार, कानूनी स्तम्भों और राजनीतिक प्रक्रिया ने मिलकर भारतीय समाज के परम्परागत स्तम्भों में बुनियादी फर्क ला दिया है।''[321]

---

[321] समकालीन लेखिका नासिरा शर्मा का कथा–साहित्य, पृष्ठ–111

सं. उमाशंकर मिश्र के अनुसार, ''इसी परिवर्तन के कारण मनुष्य की मानसिक मनोवृत्तियाँ उसे बदलने के लिए मजबूर कर देती हैं, जिससे समाज की संरचना बदलती जा रही है और इसी से समाज का नया ढांचा बन जाता है। ऐसी बदलती मानसिकता में पुराने मूल्य, नियम, परम्पराएँ, व्यवहार आवश्यक नहीं रहते और नयी परम्पराओं, मूल्यों, नियमों आदि को मनुष्य शीघ्रता से ग्रहण नहीं कर पाता। ऐसी मानसिकता के कारण ही परस्पर सम्बन्धों में बिखराव आता जाता है।''[322]

डॉ0 एस.पी. श्रीवास्तव के अनुसार, ''सामाजिक समस्या मानवीय सम्बन्धों की वह समस्या है जो समाज के लिए गम्भीर रूप से हानिकारक सिद्ध होती है और जिसके कारण बहुत से लोगों की महत्वपूर्ण इच्छाएँ पूरी नहीं हो पाती हैं।''[323] इन समस्याओं का शिकार ज्यादातर समाज के निम्न मध्य वर्ग को ही करना पड़ता है।

नासिरा जी के उपन्यासों में सामाजिक मूल्य संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं। 'सात नदियाँ एक समन्दर' में आज के ईरान की कथा है। 'शाल्मली' में पति–पत्नी के बीच उभरते पारिवारिक तनावों और विसंगतियों का चित्रण है। 'ठीकरे की मंगनी' में रूढ़ियों में जकड़े एक मध्य वर्गीय मुस्लिम परिवार की शिक्षित और संवेदनशील नारी की संघर्ष गाथा है। उनके उपन्यासों में ईरान की धरती से जुड़े वहाँ के आम आदमी का संघर्ष और दुख–दर्द है। रूढ़ियों में जकड़े किन्तु आधुनिक जीवन की दौड़ में आगे बढ़ने के लिए बेचैन पिछड़े वर्ग की मुसलमान जन–तानाशाही के विरुद्ध ईरानी जनता का संघर्ष है। हिन्दुस्तान में स्त्री जाति को आधुनिक सुविधाओं से वंचित रखा जाता है। इस पुरुष प्रधान समाज में अपने हक के लिए संघर्ष करती मुस्लिम औरतें हैं। नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों के माध्यम से प्राप्त सत्यों को पूर्ण ईमानदारी से प्रगट किया है। इन उपन्यासों द्वारा लेखक पाठकों को सामाजिक विषमताओं का अहसास दिलाना चाहता है और उनके मन में परिवर्तन की कामना के बीज भी बोता है। समाज में होने वाले अन्यायों और अत्याचारों को प्रगट किया गया है। समाज के पिछड़े वर्गों की समस्याओं को भी प्रगट किया गया है। नासिरा

---

[322] उपाध्याय, करुणा शंकर–अवाँ विमर्श, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली, संस्करण–2009 पृष्ठ–12

[323] डॉ0 एस.पी. श्रीवास्तव :शब्द और संवेदना की मनोभूमि, पृष्ठ–60

शर्मा का दो देशों के समाज से कुछ खास संबंध रहा है – एक भारतीय समाज यहाँ पर वो पली–बड़ी है और दूसरा ईरानी समाज जिसके दुख–दर्द को इन्होंने झेला है। इनके उपन्यासों में सामाजिक विचारधारा की अभिव्यक्ति व्यापक रूप से की गई है।

वैयक्तिक संघर्ष

आज के युग में मनुष्यों को बहुत सारे संघर्षों से गुजरना पड़ता है जिसमें से एक है वैयक्तिक संघर्ष। समकालीन युग भौतिकवादी हैं सभी लोग अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने में लगे हुए हैं और इसी होड़ में वे एक–दूसरे को नीचा दिखाते हैं। जिसके कारण उन्हें कई दुखों, पीड़ाओं का सामना करना पड़ता है। वैयक्तिक संघर्ष वह है जब संघर्षशील व्यक्तियों में व्यक्तिगत रूप से नफरत होती है तथा वे अपने स्वयं के हितों के लिए दूसरों को हानि पहुँचाने में भी नहीं हिचकिचाते। परस्पर विरोधी लक्ष्यों को लेकर द्वेष, क्रोध, घृणा, शत्रुता आदि के कारण यह संघर्ष हो सकता है। यह आंतरिक व ब्राह्य दोनों प्रकार का होता है। जब व्यक्ति दूसरों से अर्थात् किसी अन्य व्यक्ति से संघर्ष करता है तो यह ब्राह्य संघर्ष होता है और जब वह स्वयं से संघर्ष करता है तो यह आंतरिक संघर्ष है। नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों में दोनों प्रकार के संघर्ष को उजागर किया है। उनके पात्र किसी न किसी संघर्ष से गुजरते हुए दिखाई देते हैं। जैसे – किसी कार्य को करने या ना करने का मानसिक द्वन्द्व आन्तरिक संघर्ष है। इसके उदाहरण नासिरा शर्मा के उपन्यास 'ठीकरे की मंगनी' में देखिए –

"मैंने जब तुम्हें पहले दिन देखा था, तो ऐसा लगा था कि यह तो मै हूँ। मैं ऐसी ही तो थी। छोटी–छोटी खुशी को पाकर निहाल हो जाने वाली, दूसरों के लिए अपने को निछावर करने वाली, अपने को निरन्तर बांटते रहना ही मेरा संतोष था – मगर एकाएक सब–कुछ बदल गया। नितिन से मेरी वह मामूली–सी मुलाकात, सादगी से गहराई में बदली। शादी तक बात पहुँचने से पहले ही संबंध टूट कर बिखर गए। अमीर लड़कियों से दोस्ती करने की उसकी आदत से मैं परेशान थी। मैं अपना स्थान समझ नहीं पाती थी वास्तव में क्या है ? फिर एक स्थिति पर पहुँच कर मुझे लगा कि मैं उसके लिए कोई महत्त्व नहीं रखती। मेरे लिए वह कुछ भी छोड़ने को तैयार नहीं था, मगर मुझसे हर तरह के बलिदान की अपेक्षा करता था।

मैं इतनी बार अपमानित हुई की जख़्मी भावनाओं को लेकर मैं अपने में लौट आई। विवाह हुआ। पति, घर, बच्चे, प्रेम, आदर–सम्मान सब–कुछ मिला, मगर मैं पैसा कमाने, कुछ बनने की दौड़ में छोटे–बड़े सुखों का गला बड़ी आसानी से घोंट देती। कहीं पर मेरे मर्म को उन अमीर लड़कियों की उस संगत ने अनजाने में बेधा था तो दूसरी ओर रुपये की चमक ने मेरा महत्व नितिन की आँखों में कम किया था। इस चोट ने मेरी दुनिया बदल डाली थी। तुम्हें देखकर मैं उस दिन ठहर गई, ठिठक गई, सोचने लगी, अपने को खोकर मैं क्या बन रही हूँ ?

मेरी भावनाएँ सुन्न पड़ गई थीं, मगर अब सच कहती हूँ, मैं अपने को पा गई हूँ। मैं उसी तरह जीना चाहती हूँ, जैसी मैं थी। यहाँ से लौट कर जब जाऊँगी, तो अपने घर को, बच्चों को, पति को बिना किसी पूर्वाग्रह के जी भर कर जीऊँगी। तुमने पूछा है कि क्या मुझे वह खुशी मिली, जिसकी मुझे तलाश थी। उसका जवाब तुम्हें मेरी यह कहानी सुन कर मिल गया होगा। धीमे–धीमे भारी आवाज़ में कहते हुए विमला एकाएक चुप हो गई।''[324]

''महरुख़ के तेवर अब बिल्कुल बदल चुके थे। उसमें जिन्दगी की सही अभिव्यक्ति की सूर्ख़ी साफ़ झलकती थी और वही अभिव्यक्ति स्कूल और गाँव को एक दिशा दे रही थी। एक तरंग थी, एक लहर थी, जो गाँव के पूरे माहौल में धड़क रही थी। वैसे बीस साल किसी भी जगह में बदलाव लाने के लिए कम नहीं होते, मगर कुछ इन्सानी बस्तियाँ ऐसी भी होती हैं जो बरसों अनछुई ऊँघती–सी किसी पहाड़ी झील की तरह ठहरी रहती हैं, जब तक कोई सामाजिक हलचल उन्हें पूरी तरह झिंझोड़ कर जगा न दे और यह काम महरुख़ ने इस छोटे–से गाँव में आकर दिखाया था।''[325] उसने जो कुछ जाना था, समझा था, सीखा था, वह किताब में लिखे दूसरों के अनुभवों के जरिए नहीं, बल्कि लोगों के बीच एक हवा में साँस लेकर। तभी वह इन्सानों को उनके मजहब, सवाल–जवाब, रंग और लिबास से न पहचान कर उनके दुख–सुख से पहचानने लगी थी।

''मैंने आपका क्या बिगाड़ा था, जो आपने मेरे मासूम–बेगुनाह जज्बात को

---

[324] नासिरा शर्मा 'ठीकरे की मंगनी' किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2013 पृ0 150–151

[325] नासिरा शर्मा'ठीकरे की मंगनी' पृ0 162

रौंदा, कुचला और मुझे अकेला छोड़ दिया.... आपकी ख्वाहिशों के पुल में गुजरती हुई मैं जिस हाल को पहुँची थी, वहाँ सिर्फ दलदल थी..... सिर्फ दलदल। मौत और जिंदगी के बीच में लटकती वह मैं थी।''[326]

''अब्बा जब आयेंगे, तो उन्हें बाग़ के सामने वाला कमरा दूँगा, जिसमें बैठकर वह खेत की जगह शहर का नजारा देखेंगे। उन्हें मैं मक्का, मदीना, इराक, ईरान हर इबादतगाह की ज़्यारत कराने ले जाऊँगा, तब उन्हें अहसास होगा कि मेरे पास क्या है, जो भाई उन्हें नहीं दे पाए, मगर... वह तो सिर्फ अज़मेर वाले ख़्वाजा के मुरीद हैं और अजमेर...अजमेर तो वहीं हिन्दुस्तान में रह गया। अजमेर को कराची उठा कर नहीं लाया जा सकता, फिर...फिर...।' वह सिर पकड़ कर बैठ जाता।

निज़ाम के अन्दर चलते तनाव का अहसास उसके पास बैठे दूसरे शख्स को बिल्कुल नहीं हो पाता था कि वह दो स्तरों पर जी रहा है। जब वह किसी ताजिर से नफे–नुकसान की बात कर रहा होता, तो उसका दिमाग़ नोटों की गड्डी की हक़ीक़त के साथ अपने गाँव और घर की सैर कर रहा होता। कभी–कभी वह किसी बड़े अनुबन्ध पर हँसते हुए हस्ताक्षर करते हुए अपने से कहता भी जाता था, 'सारे आराम, शान–शौकत और दौलत को हासिल करके मैंने पाया क्या ? किसके लिए इतनी मेहनत करके मैं दौलत का अम्बार खड़ा कर रहा हूँ...किस के लिए ?''[327]

'शाल्मली' उपन्यास में भी शाल्मली इकलौती संतान होने के कारण अपने माँ–बाप की लाड़ली थी। वह खूब पढ़ी–लिखी थी उसने एम.ए. कर लिया था। केवल औरत बनकर रहना उसे पसंद नहीं था। उसका विवाह नरेश से हो जाता है जो किसी सरकारी दफ्तर में अधिकारी है। नरेश अपनी पत्नी पर पूरा अधिकार चाहता है। वह अपनी पत्नी को दासी बनाकर रखना चाहता है चाहे वह पद योग्यता और प्रतिभा में उससे तुच्छ ही क्यों न हो। वह अपनी पत्नी को यह कहकर अपमानित करता है, ''अब तुम मेरी नकल मत करो – तुम औरत हो और अपनी

---

[326] नासिरा शर्मा'ठीकरे की मंगनी' पृ0 178

[327] नासिरा शर्मा, नासिरा शर्मा जिंदा मुहावरे, पृ0 69

मर्यादा को पहचानो।''[328]

नरेश के इन्हीं विचारों से उसे दुख पहुँचता है। वह आहत होती है। नरेश के ये विचार उसे बड़ा दुख पहुँचाते हैं जबकि वह अपने पति के साथ मिलजुल कर रहना चाहती थी। ''नौकरी के कुछ दिनों बाद शाल्मली ने महसूस किया था कि नरेश मित्रों के बीच बैठकर शाल्मली के जिस व्यवहार पर गौरव से भर उठता है, वही बातें घर में सहन नहीं करता था और बेमतलब़ खीजकर लड़ बैठता था। कभी शाल्मली टाल जाती, कभी चिढ़ कर सोचती, बाहर मैं एक सुशिक्षित, चतुर–चुस्त जीवन संगिनी बनूँ, मगर घर में केवल एक गूंगी पत्नी जो गूंगी तो हो साथ–ही–साथ समय पड़ने पर अन्धी और बहरी भी बन सकती हो। नरेश को मुझ जैसी औरत फिर क्यों पसन्द आई थी ? ले आता कोई सजी–सजायी रबर की गुड़िया को, जो पेट दबाते ही बोलती और चाबी देते ही चलती। हाथ और गर्दन अपनी इच्छा से ऊपर–नीचे, दाएँ–बाएँ करके विभिन्न मुद्राओं में उसे घर के एक कोने में सजा देता। वह चाहने पर भी गूंगी, अन्धी, बहरी नहीं बन सकती है। नरेश ने जब उसे इन्हीं गुणों के साथ पसन्द किया था, तो अब उन गुणों को नकारने से लाभ ? शाल्मली अपने और नरेश के सम्बन्ध की व्याख्या करती, मगर इससे क्या वह चिन्ता–मुक्त हो पाती, जैसे–जैसे गहरी उतरती वैसे–वैसे अपने को समस्या से अधिक जुड़ा और समर्पित पाती।''[329]

शाहआलम द्वारा 'जीरो रोड़' उपन्यास में अपनी व्यक्तिगत पीड़ा को व्यक्त करते हुए – ''हम कितने वर्षों से इस शहर में, इस मोहल्ले, इस इमारत में एक साथ रह रहे हैं। मगर आपस में हमने अपनी ज़िन्दगी का दरवाजा तो दूर एक मामूली–सी झिरीं तक दूसरों के लिए नहीं खोली है। बस हम कमाने आये हैं। कमा रहे हैं। अपने ख़ानदान को, जो हमसे दूर हैं पैसा भेज अपना फर्ज़ पूरा कर रहे हैं। कितनी अजीब बात है कि हम नहीं जानते कि जो लोग अपनों से दूर यहाँ तन्हाई की सजा काट रहे हैं, उनका दुख–सुख क्या है ? किसी को किसी की ज़िन्दगी में बेजा दख़लन्दाज़ी या ताक–झाँक करना मुनासिब नहीं है। मगर फ़िल्मों द्वारा,

---

[328] नासिरा शर्मा, नासिरा शर्मा शाल्मली राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, संस्करण–2012 पृ0 21

[329] नासिरा शर्मा, शाल्मली, पृ0 152–153

साहित्य व कला द्वारा, गुज़रे जख़्मों को हम कुरेदकर किस तरह अतीत में घटे उन तारीख़ी हादसों को पर्दे पर लाते हैं और गुज़रे इंसानों के दुख को समझने के लिए बेचैन हो उठते हैं। मगर अपनों के प्रति उदासीन रहते हैं। खैर, मुझे दिल खोलना था मैंने खोला।''[330]

व्यक्ति के भीतर होने वाले संघर्ष के कई कारण हैं – कुण्ठा, स्वार्थपरता, हितों का टकराव। जब कोई भी व्यक्ति अपना उद्‌देश्य निर्धारित करता है तो उस उद्‌देश्य को प्राप्त करने के लिए वह बहुत कोशिशें करता है लेकिन जब वह उस उद्‌देश्य को प्राप्त नहीं कर पाता जिसके कारण उसमें क्रोध घृणा आदि भावनाएँ पैदा हो जाती हैं जैसे 'शाल्मली' उपन्यास में भी शाल्मली अपने पति को हर तरीके से प्राप्त करना चाहती है पर अंत तक वह उसे प्राप्त नहीं कर सकती, उसका प्यार प्राप्त नहीं कर सकी जिसके कारण वह निराश हो जाती है।

इस प्रकार नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों में बहुत से आंतरिक व ब्राह्य आंतरिक संघर्षों को उजागर किया है जो उन्हें एक उच्च कोटि की लेखिका बनाते हैं।''जीवन अब सुख की अनुभूति नहीं देता, बल्कि केवल संघर्ष ही लगता है। यहाँ हर कदम पर चुनौतियों से घिर किसी योद्धा की तरह दोनों हाथों से तलवार चलानी पड़ती है। अब केवल जूझना मात्र सुख नहीं दे पाता, बल्कि सुख की अनुभूति की जगह उनको परास्त करना आवश्यक हो गया है। यह उसकी इच्छा नहीं है, बल्कि उस पर लादी हुई एक आज्ञा है, जिसका पालन करना उसके लिए परम आवश्यक है। इस अभिशाप से दाम्पत्य जीवन को बचाने की कोशिश में उसका अपना व्यक्तित्व कहीं खो रहा है। महा–संग्राम के असीमित फैलाव में अपने अस्तित्व को ढूँढना असम्भव हो जाता है। अपने को गिद्धों से बचाना, अपने टुकड़ों को समेटना, अपने जख्मों पर मरहम–पट्टी करने का अवसर तक नहीं मिलता। निरन्तर पड़ते वारों के बीच अपने को संभालते–संभालते वह कितनी बार गिरी है, कितनी बार चकनाचूर हुई है।''[331]

---

[330] नासिरा शर्मा, 'जीरो रोड़' भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली–110003, संस्करण–2013 पृ0 89–90

[331] नासिरा शर्मा'शाल्मली', राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, संस्करण–2012 पृ0 14

पारिवारिक संघर्ष

परिवार एकाधिक व्यक्तियों का वह समूह है जो विवाह या रक्त संबंध के कारण पारस्परिक हित चिन्तन करते हुए सहचर्य भाव से एक ही घर में रहकर वैयक्तिक विकास करने के साथ–साथ परिवार के व्यक्तित्व का निर्माण करता है।

विकसित एवं सभ्य समाज की पहचान हमें स्वस्थ पारिवारिक जीवन में ही दिखाई देती है। परिवार का लघुतम घटक दाम्पत्य जीवन है। सुखी दाम्पत्य जीवन के लिए संयम, निष्ठा, लचीलापन, परस्पर आदर तथा स्नेह, परस्पर विश्वास आदि बुनियादी चीजों का होना आवश्यक है। आधुनिक औद्योगीकरण, व्यवसायिकता, दौड़–धूप और आधुनिकीकरण की प्रवृत्ति में स्त्री–पुरुषों के सम्बन्धों में काफी परिवर्तन उपस्थित किया है। इसलिए परिवार का संतुलन बनाए रखने के लिए पति–पत्नी में सहचर्य की भावना होनी चाहिए। यह संबंध बनाए रखने के लिए दोनों ओर से प्रयास होना चाहिए। स्त्री–पुरुष संबंध उच्चतर स्वस्थ भूमिका पर परिनिष्ठित होने पर ही आभामय बन पाते हैं। लेकिन जब इन संबंधों में अलगाव, दरार, टूटन तथा घुटन की भावना पनपने लगती है तब उनमें टकराहट उभरने लगती है। इसकी परिणति दाम्पत्य संबंधों में विघटन के रूप में दिखलाई देती है। नासिरा शर्मा ने 'शाल्मली' उपन्यास द्वारा असफल दाम्पत्य जीवन का यथार्थ चित्रण हमारे सामने प्रस्तुत किया है। 'शाल्मली' उपन्यास में नरेश और शाल्मली पति–पत्नी हैं। इस उपन्यास में पति–पत्नी के बीच उभरते पारिवारिक तनावों और विसंगतियों का चित्रण किया गया है। यहाँ पर पति नरेश अहंकारी एवं रूग्ण वृत्ति का है वहीं पर पत्नी शाल्मली आधुनिक विचारों की होने के बाद भी परम्परागत आदर्श मूल्यों को मानने वाली है। ऐसी परिस्थितियों में नरेश को पत्नी का ऊँचे ओहदे पर काम करना तथा उसकी प्रतिष्ठा अखरती है। इससे शाल्मली को अपने को सम्भालना कठिन हो गया था। लाख वह सहिष्णुता का परिचय देती मगर उसके मन का उद्‌गार जब मस्तिष्क पर छाने लगता है तो वह बौरा जाती है। इस उपन्यास के माध्यम से दांपत्य जीवन के संतुलन में बाधा बनती जा रही पुरुष की परंपरागत मानसिकता का चित्रण किया गया है। इसके साथ–साथ एक स्त्री द्वारा आधुनिकता और आदर्शवादिता में ताल–मेल बिठाया गया दिखाया गया है। नरेश हर समय शाल्मली को इस बात का अहसास दिलाता है कि औरत पुरुष की दृष्टि में हीन है

और भोगने मात्र की एक वस्तु है और वही उसकी असली पहचान भी है। वह अक्सर अपना अधिकार जताता है। शाल्मली का नौकरी करना और कॉन्फ्रेन्स के लिए दूर–दूर जाना नरेश को बराबर खलता रहता है। वह शाल्मली से कहता है मैंने तुम्हें नौकरी करने की छूट दी है, इसका यह अर्थ नहीं है कि तुम अपने को पूर्ण स्वतंत्र समझने लगो। वह अपनी पत्नी पर पूर्ण कब्जा चाहता है चाहे वह पद योग्यता और प्रतिभा में उससे हीन ही क्यों न हो। अब तुम मेरी नकल मत करो – तुम औरत हो और अपनी मर्यादा को पहचानो। यहाँ पर सम्बन्ध निभाने की कोशिश दोनों तरफ से होनी चाहिए क्योंकि पति–पत्नी दाम्पत्य जीवन रूपी गाड़ी के दो पहिए हैं। इसलिए इसमें से अगर एक भी पहिया टूट जाता है या खराब हो जाता हो दाम्पत्य जीवन बिखर जाता है। वर्तमान परिवेश में मानवीय मूल्यों के ह्रास के साथ ही इस सम्बन्ध में भी काफी परिवर्तन आ गया है। त्याग, संयम, सेवा आदि महान मूल्यों का ह्रास हो गया है और स्वार्थी वृत्ति बढ़ गई है। परिवर्तित जीवन में प्राचीन मान्यताएँ बदल गई हैं और इसी परिवर्तित समाज में स्त्री–पुरुष सम्बन्ध भी बदल गए हैं। वास्तव में देखा जाए तो स्वस्थ एवं दाम्पत्य जीवन के लिए आवश्यक गुणों से भरपूर होने के बावजूद शाल्मली को उसके औरत होने का अहसास होता है। इसी कारण शाल्मली के मन में गूंज उठती है कि नरेश पति है और वह पत्नी है। विवाह के कुछ दिन बाद ही तो उसे इस बात का अहसास होता है कि स्वामी और दासी का यह सम्बन्ध काली छाया बनकर उनके बीच एक मजबूत दीवार का रूप धारण कर रहा है। इसलिए विवाह में आनन्द प्राप्त करने के लिए उदारतापूर्वक आत्मत्याग अंतहीन सहिष्णुता और भद्रता तथा ह्रदय की विनम्रता की आवश्यकता होती है। ऐसी परिस्थितियाँ उन पति–पत्नी के अच्छे सम्बन्धों में टकराव उत्पन्न करती हैं। अतः मानवीय गुणों की मानसिकता नरेश में नहीं के बराबर है। इसी कारण उन दोनों पति–पत्नी में प्रत्येक बात को लेकर परस्पर मानसिक तनाव का निर्माण होता है। नरेश शाल्मली द्वारा नौकरी करना और समाज में खुले दिल से व्यवहार करने के बारे में उससे कहता है तुम औरतें अपने को जाने क्या समझती हो ? बाहर नहीं निकलोगी, काम नहीं करोगी, तो संसार के सारे काम ठप्प हो जाएँगे....। ऐसी सोच उनके परस्पर सम्बन्धों में कड़वाहट उत्पन्न कर देती हैं जिसके कारण उनमें एक–दूसरे को छोटा बनाने की मानसिकता पनपने लगती है।

उनके एक–दूसरे के अहं को चोट पहुँचती है। जब ऐसी वैचारिकता पनपती है तब पति–पत्नी के बीच संघर्ष होने लगता है जो उनके पारिवारिक जीवन को कलहपूर्ण बना देता है।

शाल्मली को नौकरी करने से मनाही करने वाला, सेमिनार में सम्मिलित होने के लिए रोकने वाला नरेश जब परस्त्री से सम्बन्ध रखता है तब शाल्मली भी आक्रामक होते हुए कहती है "फिर सुनो नरेश! मुझे और उसके बीच एक को चुनने की स्वतन्त्रता तुम्हें देती हूँ। उसके साथ रहकर तुम्हें अपना जीवन सार्थक लगता है तो मेरी ओर से तुम अपने को स्वतन्त्र समझो।"[332] ऐसी परिस्थिति में नरेश इसके प्रति गम्भीर न रहकर अपने मत में परिवर्तन करने में असमर्थता दर्शाकर पति होने का अहसास दिलाता है। अर्थ की प्रधानता ने मानवीय जीवन को, सभी मानवीय सम्बन्धों को बहुत प्रभावित किया है। इसका प्रभाव आधुनिक जीवन में आज भी पति–पत्नी के सम्बन्धों पर पड़ रहा है। इतना ही नहीं बल्कि कभी–कभी अर्थाभाव पति–पत्नी में तनाव, खीझ व अलगाव का कारण भी बनता है तो कभी अर्थ की अधिकता भी उनमें दूरियाँ उत्पन्न कर देती हैं।

शाल्मली नरेश के अमानवीय व्यवहार से परेशान होकर उससे अपने सभी संबंधों को तोड़ने के बारे में सोचती है। परंतु उसको तलाक नहीं देना चाहती शाल्मली अंत में इस नतीजे पर पहुँची कि जीवन के इन दस–ग्यारह वर्षों के संताप को वह जीवन का महत्वपूर्ण मुद्दा बनाकर उसकी तरफ से निर्लिप्त हो जाए, इसी में उसकी भलाई है, वरना जिस व्यक्तित्व को उसने इतना संभालकर रखा है उसे अनजाने में तोड़ देगी और उसकी अपनी जीवन–यात्रा की धारा टूटकर शाखाओं में बँटने लगेगी और उसका ठोस व्यक्तित्व एक चंचल धारा की तरह अपना सीधा लक्ष्यपूर्ण प्रवाह खो बैठेगा।

वस्तुतः पति–पत्नी के दाम्पत्य सम्बन्धों में जब किसी व्यक्ति का आगमन होता है तो वह दाम्पत्य सम्बन्धों के लिए अहितकारी सिद्ध होता है और सफल दाम्पत्य जीवन में अलगाव की भावना उभरने लगती है। समाज में निजी स्वतन्त्रता पर कुछ बन्धन भी मौजूद हैं। परिवार, मनुष्य और समाज के बीच सेतु का काम

---

332 नासिरा शर्मा, शाल्मली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, संस्करण–2012 पृ0सं0 163

करता है। परिवार, मनुष्य की प्रथम पाठशाला है जहाँ पर वह सभी संस्कार, मूल्य आदि सीखता है। अपने जन्म से लेकर लालन–पालन और अंत तक वह परिवार पर ही निर्भर करता है। परिवार में रहकर ही वह सभी व्यवहारों को सीखता है। परिवार के प्रत्येक व्यवहार को जानकर ही वह अपने आप को समाज में देखता है कि वह क्या कर रहा है, कैसे कर रहा है और उसे प्रत्येक प्रकार के सुख–दुख की स्थिति का ज्ञान होता है। परिवार से ही सब कुछ सीखने के बाद समाज में उसके अच्छे–बुरे की पहचान होती है। समाज में व्यक्ति परिवार की मूल इकाई है और परिवार समाज का अभिन्न अंग है। हर एक व्यक्ति का कर्तव्य बनता है कि वह अपने परिवार और समाज को सही ढंग से व्यवस्थित करे। जब तक उसमें ऐसी भावना नहीं होगी तब तक वह अपने परिवार के सभी सदस्यों के साथ मिलकर नहीं चल पायेगा और एक सामाजिक समस्या पैदा हो जाएगी।

संयुक्त परिवार का विघटन

पहले समय में परिवार मिल–जुल कर रहते थे। एक–दूसरे की खुशी में शामिल होते थे और एक–दूसरे के दुख को अपना दुख मानते थे। कोई मेहमान बाहर से आये तो उसे अपना घर का व्यक्ति समझकर उसकी दिलों जान से सेवा की जाती थी। बच्चे भी आपस में मिल–जुल कर खेलते थे। सारा परिवार एक ही घर में रहता था। किसी में भी मेरे–तेरे की भावना नहीं थी। पर जैसे–जैसे समय बीतता गया लोगों के दिलों में दुरियाँ आ गई। सभी ने अपने–अपने घर बनाने शुरू कर दिए। किसी को किसी से कोई लेना–देना नहीं है। सभी का आपस में लड़ाई–झगड़ा आरंभ हो गया। जमीन की प्राप्ति के लिए भाई–भाई का न रहा जिस कारण पहले जहाँ संयुक्त परिवार थे अब उनका विघटन होना शुरू हो गया। नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों में इस विघटन को भी बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रगट किया है। इसका एक उदाहरण देखिए – "महरुख को एक अजनबी उदासी इस बार मकान पर छाई महसूस हुई। ख़ास कर दोपहर में सांय–सांय करता यह घर और ख़ामोश लगने लगता था। रहने वाले ही कितने बचे थे ? ताया अब्बा के इन्तकाल से बहुत पहले नए मकान में जाने के वक्त में उनके हिस्से में ताला पड़ गया था। बड़े चचा का हिस्सा बुरी तरह टपकने लगा था। इसलिए वह दादी के बड़े दालान की तरफ़ चले आये थे। उसे भी खाली करके ताले के हवाले कर दिया

गया था। करना भी क्या था। लड़कियाँ अपने घरों की हो गई थीं और लड़के जहां नौकरी मिली वहीं गृहस्थी जमा बैठे थे। लम्बे–चौड़े इस मकान में, जो कभी पूरे ख़ानदान के लिए छोटा पड़ने लगा था वहाँ गिरती दीवारों और टपकती छतों के बीच सिर्फ़ बूढ़े बचे रह गए थे। ऐसी ही एक उदास शाम को बड़े चचा ने हंसते हुए कहा : हमारी बाईस औलादें, बाईस सूबों की तरह हमारा रिश्ता सारे हिन्दुस्तान से बांध बैठी हैं – सोहल बंगलौर में है, सोहेल बंगलौर में है, शहज़ाद कलकत्ता और तनवीर काश्मीर में और अब सुना है कि शहनाज के दूल्हे की बदली अजमेर हो गई है – सच है, दाने–दाने पर खाने वाले का नाम लिखा होता है, तभी हैदर असम पहुँच गया ...''कहकर चचा हंस पड़े। उनकी इस बात पर सब मुस्करा पड़े। 'अपन बाग़ फले–फूले तो माली क्यों ने खुश हो। एक कोंपल एक तने में बदलती है फिर शाख–पत्तियाँ, फल–फूल, कितना फैल जाता है उस बीज का फुटाव–फिर एक दिन वह दरख़्त गिर जाता है और ...''[333]

भारत–पाकिस्तान बंटने के बाद संयुक्त परिवारों के विघटन की स्थिति का वर्णन देखिए– ''अब इमाम को कभी–कभी निज़ाम की बातें याद आतीं और वह सोचने लगता कि क्या सचमुच उसकी बातों में सच्चाई थी कि हम यहाँ अपने पैरों पर खड़े नहीं रह सकते ? हमारी जड़ें काट कर हमें ज़मीन और आसमान के बीच छोड़ दिया गया है ?

नहीं...नहीं। उत्तेजित–सा इमाम अपनी जगह से खड़ा हो जाता।

कुछ कहा आपने ? चौंकता पास बैठा आदमी।

नहीं। कह कर इमाम शर्मिन्दा–सा हाथ धोने के बहाने कमरे से निकल जाता और अपने को सहज बना, मुँह–हाथ धो, कंघी कर, आराम से बाथरूम से निकल सीट पर आकर बैठ जाता।

आप पाकिस्तान क्यों नहीं गए ? अख़बार तह करके रखते हुए उनका कोई साथी जिज्ञासावश पूछ लेता।

वतन छोड़कर जाने की बात दिमाग़ में कभी आई नहीं? इमाम की सारी तैयारी इस सवाल से अन्दर–अन्दर ढह जाती।

---

[333] नासिरा शर्मा'ठीकरे की मंगनी' किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2013 पृ0 158

आपके तो सगे भाई हैं वहाँ। जाने का, मिलने का, दिल तो चाहता होगा आपका ? वही आवाज़ कुरेदने पर उतर जाती।

हम लोग ज़्यादा घूमने–फिरने वाली तबियत के नहीं हैं। सफ़र से घबराते हैं। इमाम जवाब देता।

वह तो आए होंगे मिलने ? फिर सवाल उठता।

ऐसे वाक्य के बाद इमाम अक्सर सोचता कि लोगों के दिल व दिमाग़ में इतनी बुराई नहीं है, जितनी एक उलझी गुत्थी को समझने की उत्सुकता है, मगर इतनी बारीकी से क्या हर इन्सान दूसरे को देखता और समझता है? या अपनी कुण्ठाओं से निकल कर शब्दों के अर्थ बदल सकता है? उसके दिल पर मैल नहीं जमने देना चाहिए। आख़िर बटवारे का ग़म उसको जितना है, उतना ही दूसरे हमवतन को भी हो सकता है। चूँकि खानदान मुसलमानों के अधिक बटे हैं, इसलिए उनसे सवाल ज़रूर पूछा जाएगा, फिर इस बात को लेकर इतना संवेदनशील होने की क्या जरूरत है ? इमाम अपने को समझाता, दिलासा देता, अपने मरते दिल को खुशुनमा बातों से जिन्दा करने की कोशिश करता और काम में लग जाता। कुछ दिन, चन्द हफ्ते आराम–सुकून से गुज़र जाते।''[334]

इन्होंने अपने उपन्यासों में यह भी दिखाया है कि हम आधुनिकता की दौड़ में अंधे होकर लगातार भागते जा रहे हैं। इसलिए परिवार को एक साथ बाँध कर रखने में नाकाम हैं। पहले संयुक्त परिवार होने से एक–दूसरे के प्रति मान–मर्यादा और संस्कार रहते थे। सभी किसी बात का फैसला एक–दूसरे से राय करके लेते थे। दादा–दादी, चाचा–चाची, सभी मिलजुल कर रहते थे कोई किसी की बात का बुरा नहीं मानता था। जैसे – 'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास में महरुख को जब दिल्ली भेजने का फैसला किया जाता है तो सभी से राय ली जाती है कि क्या किया जाये अर्थात् पहले महरुख की शादी की जाए या उसे उसके भाईजान के साथ दिल्ली पढ़ने के लिए भेजा जाए। सारे परिवार की रजामंदी से ही उसे आगे दिल्ली पढ़ने के लिए भेजा जाता है। लेकिन अब परिवार टुकड़ों में बंटने के कारण हमारे बच्चे दादा–दादी, चाचा–चाची के प्यार से वंचित हो गए हैं। बेटा अपनी माँ

---

[334] नासिरा शर्मा,'जिंदा मुहावरे', वाणी प्रकाशन,, नई दिल्ली, संस्करण–2012 पृ0 78

के पास ही नहीं रहता वह पैसे कमाने के पीछे अंधाधूंध लग गया है जिसके कारण उसमें संस्कार नाममात्र के रह गये हैं। अगर हमारे संस्कार नहीं रहेंगे तो हमारी संस्कृति भी नहीं रहेगी न ही बच्चे रिश्तों के महत्व को समझ पाएँगे। जैसे 'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास में भी रफत अपनी माँ के बीमार होने पर भी अपनी माँ के पास न रहकर दिल्ली रहता है और अपनी माँ को दिल्ली चलने के लिए कहता है और कहता है कि वो उसका इलाज दिल्ली में ही करवा देगा पर वो वहाँ पर नहीं रह सकता क्योंकि वो दिल्ली में नौकरी कर रहा था। जब उसकी माँ की मृत्यु हो जाती है तो रफत वहाँ से वापिस जब दिल्ली जाने के लिए निकलने लगता है तो उसकी मौसी अपनी आँखों में आँसू भर कर कहती है कि उसकी बहन के जीवित रहते वो रफत को कभी–कभार देख लेती थी क्योंकि रफत अपनी माँ के बहाने यहाँ आ जाता था परन्तु अपनी माँ की मृत्यु के बाद वो अब रफत से मिल नहीं पायेगी। इस उपन्यास के माध्यम से दिखाया गया है कि कैसे आज की युवा पीढ़ी अपनी इच्छाओं की पूर्ति हेतु अपना घर–परिवार, सगे–सम्बन्धियों को छोड़कर विदेश चले जाते हैं और अपने संस्कारों को भी भूलते जाते हैं।

नासिरा शर्मा ने अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रगट किया है कि अगर आने वाली पीढ़ी को संस्कारी बनाना है ते संयुक्त परिवार को फिर से जीवित करना होगा। तभी बच्चे संस्कारों को सीख सकेंगे उनमें एक–दूसरे के प्रति सम्मान की भावना उत्पन्न होगी। वह एक–दूसरे के सुख–दुख को अपना सुख–दुख समझेंगे।

माता–पिता का संघर्ष

माता–पिता अपने बच्चों की खुशी के लिए सब कुछ करते हैं। वह अपने बच्चों का उज्ज्वल भविष्य चाहते हैं और उनके विकास की कामना करते हैं। नासिरा शर्मा ने अपनी रचनाओं में प्रगट किया है कि जिस तरह से माता–पिता के बीच संघर्ष होता है, वो बच्चों के भविष्य के भावात्मक समायोजन को प्रभावित करते हैं। 'ठीकरे की मंगनी', 'जिंदा मुहावरे', 'पारिजात', 'शाल्मली' आदि उपन्यासों में अपने बच्चों के लिए माता–पिता के संघर्ष को उजागर किया गया है। 'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास में जब महरुख को आगे पढ़ाई के लिए दिल्ली भेजने की बात होती है तो उस समय माता–पिता के बीच होने वाले संघर्ष को देखिए ––''क्या मैं माँ होकर अपनी बेटी को कुएँ में ढकेलूँगी? हमारा खानदान कोई मामूली खानदान

नहीं हैं। सैयद अहमद कोई ओछे–तुच्छे लोगों में से नहीं थे। लखनऊ के चन्द घरानों में उनका नाम सबसे ऊपर गिना जाता था। सैयद रशीद के नाम के बिना हिकमत की तारीख अधूरी है, आज उनके नवासे पर यूँ एतमाद नहीं? वाह भई इसी को कहते हैं वक्त की मार। तुम हर बात को अपने नज़रिये से देखती हो। मैं खुद परेशान हूँ। अब मुझे ज्यादा रंज मत पहुंचाओ। अमजद ने कहा और करवट बदलकर लेट गए।''[335]

इसी तरह 'शाल्मली' उपन्यास में माँ द्वारा शाल्मली के विवाह की बात करने पर पिता द्वारा उसे पत्नी के अतिरिक्त एक अलग पहचान होने की बात करना –

''बेटा, बेटी जो भी उसे समझो तुम, मैं नहीं रोकती, मगर मेरी नजर में वह लड़की है और उसके हाथ पीले करने है। माँ उकताहट भरे लहजे से कहतीं।

मुझे भी चिन्ता है। दो वर्ष बादं अभी उसे कम्पिटिशन में बैठने दो। ब्याह दिया तो चूल्हे–चक्की में पिस जाएगी। पिता का चिन्ता भरा स्वर उभरता।

औरत की वही पहचान है। माँ दार्शनिक अंदाज में कहती।

पहचान है, मैं मानता हूँ, मगर मैं चाहता हूँ कि मेरी बेटी ससुराल में जाकर भी राज करे, अपने पैरों पर खड़ी हो जाए। किसी की पत्नी के अतिरिक्त भी उसकी अपनी एक पहचान बन जाए। बस, दूसरे दिन शाल्मली को ब्याह दूँगा। पिता सपनों में डूबने लगते।

लड़के दरवाजे पर खड़े मिल जाएँगे ? माँ ने उनके स्वर की नकल कर वाक्य पूरा कर दिया।

देख रहा हूँ। मुझे भी बेटी की चिन्ता है। तुम्हारी तरह मुँह से नहीं कहता, तो तुम समझती हो कि मैं चिन्ता मुक्त हूँ। पिताजी चिढ़ गए थे।

मेरी इच्छा है कि लड़का भी देखते जाओ और इस बीच यह जितना पढ़ना चाहे, पढ़ती जाए, जैसे ही लड़का अच्छा मिला, मैं इसको ब्याहने के पक्ष में हूँ। तुम्हारी एक नहीं सुनूँगी। माँ ने फैसला सुनाया।''[336]

'पारिजात' उपन्यास में रोहन द्वारा अपने बच्चे के लिए किए संघर्ष का

---

[335] नासिरा शर्मा'ठीकरे की मंगनी' किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2013 पृ0 26

[336] नासिरा शर्मा'शाल्मली', राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, संस्करण–2012 पृ0 20

चित्रण बड़े ही मार्मिक ढंग से किया गया है। "वह लौटेगा। वह तुम्हारा बेटा है। एक दिन आएगा। इस तरह की बातें करने वाले हवा में सिक्के नहीं उछालते, बल्कि उनके पास रोहन की ज़िंदगी से मिलती–जुलती कोई कहानी ख़ुद की होती या फिर उनके दोस्तों में से किसी की, जिन्हें सुन–सुनकर उसे लगता कि औरतों के दुखड़े के बरअक्स मर्दाना दुःख का भी एक वृत्तांत है, जो इल्ज़ामों व बदनामियों की झीनी–झीनी चंदरिया से छुपा हुआ है। काश ! यह दर्द भी कोई ऊँची आवाज़ से बिरह की तरह गाता, महाकाव्य की तरह रचता, कला के रूप में गुफ़ाओं के पत्थरों पर उकेरता, किसी सनद की तरह लेखा अभिगार में सँजोता, मगर बाप के दिल की तो कोई बात नहीं करता। उनके संतान–प्रेम के एहसास को कभी कोई शब्द ही नहीं दिया गया ममता की तरह। यह कैसा अन्याय है ?

बाप एक रक्षक, एक सायेदार दरख़्त और दूसरे शब्दों में सत्ता का परिरूप है, मगर बाप के उस प्रेम का कोई बखान कहीं नहीं है जो 'ममता' शब्द की तरह मानक बन सकता है। आख़िर क्यों ?"[337]

"रोहन की आँखों के सामने बाबा और माँ के दुलार के वे दृश्य गुज़रने लगे जब वह किसी एक की गोदी में लोटता, फिर दूसरी की गोदी में हुमकता था। कुछ ऐसा ही वात्सल्य का मिला–जुला मंजर ऐलेसन और उसके बीच पारिजात को लेकर था। दूसरी गोद की कमी क्या वह अपने दूसरे शौहर के जरिए पूरी करेगी ? क्या वह रिश्ता भी ठहरेगा या वह भी किसी हलकी–सी चोट से टूट जाएगा। रिश्ते क्या सिर्फ़ भावना के आवेग पर बनते और बिगड़ते हैं ? उनमें स्थायी जैसा कुछ भी नहीं होता है ? ऐसी तरक़्की से क्या फायदा जब इनसान दूसरे इनसान के लिए सिर्फ़ बाज़ार में आने वाला नया उत्पादन बनकर रह जाए ?"[338]

भाई–बहन के सम्बन्धों का संघर्ष

बहन–भाई के प्रेम का प्रतीक त्योहार रक्षा–बंधन श्रावण मास की पूर्णमासी को मनाया जाता है। इस पर्व में बहन–भाई की कलाई पर राखी बाँधती है और उसकी लम्बी उम्र और उज्ज्वल भविष्य की कामना करती है। 'अक्षयवट' उपन्यास

---

[337] नासिरा शर्मा'पारिजात,' किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2017 पृ0 438

[338] नासिरा शर्मा'पारिजात', किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2017 पृ0 439

में रमेश की बहन द्वारा जहीर को राखी बाँधने का उल्लेख मिलता है। जब जहीर रमेश की बहन को अपनी दुकान पर आने का न्यौता देता है, वह उससे कहती है कि जब जहीर उससे राखी बंधवाएगा तभी वह उसकी दुकान पर आएगी। जहीर उससे कहता है – बिना राखी बाँधे ही जो पसंद आये आप ले सकती हैं, दुकान आपकी है। रमेश और मुझमे फर्क क्या है ? अर्थात भाई–बहन प्रेम संबंध अत्यंत पवित्र एवं अगाध स्नेह से परिपूर्ण होता है जहाँ छल–कपट का तनिक भी अंदेशा नहीं होता।

"हवाई क़िले की सैर से महरुख़ लौट आई थी। अब उसकी समझ में यह बात आ गई थी कि वह रफ़त भाई के दिल व दिमाग में कभी नहीं थी। वह तो रिश्ते के नाम पर एक पोस्टर थी, एक नारा थी, जिसे रफ़त भाई समाज की दीवार पर चिपका कर अपनी पहचान का झण्डा ऊँचा रखना चाहते थे, वरना वह महरुख़ का हक़ किसी और औरत को क्यों दे बैठते ? उसके दिल में बग़ावत के तूफ़ान उठने लगते। ग़म के बादल छंट गए थे। अब वहाँ नफ़रत और हिक़ारत का प्यार के नाम पर, कभी ज़िम्मेदारी के नाम पर, कभी रिश्तेदारी के नाम पर। अम्मी, अब्बू, शाहिदा ख़ाला, कोई नहीं है उसका अपना। यह सोचते–सोचते महरुख़ का दिल सख्त पड़ने लगा था। यह सख्ती उसके बिखराव को समेटने में मददगार साबित हुई।"[339]

"मुबारक हो खुरशीद, बेटे की पैदाइश! शकरआरा ने उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा था और सौ–सौ के कई नोट बेटे के सिर से उतारकर पास खड़ी नाइन के हाथ में थमा दिया था।

दुल्हन की बड़ी बहन है – शकरआरा बेगम! सास ने बताया।

फूल–सी बच्चियाँ तुम्हारी हैं? लैस लगी फ्रॉकों से सजी बड़ी–मझली को देखकर किसी ने पूछा।

जी। शकरआरा ने गरूर से भरकर कहा।

यही दो बिटियाँ हैं या बेटवा भी है? किसी बूढ़ी ने बेटियों की पीठ पर हाथ फेरते हुए सहज रूप से पूछा।

---

[339] नासिरा शर्मा'ठीकरे की मंगनी' किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2013 पृ0 62

अभी तो नहीं। शकरआरा का चमकता चेहरा एकाएक मंद पड़ गया।

अल्लाह ने चाहा तो बहन की तरह तुम्हारी गोद में भी खानदान का वारिस खेलेगा। उसी बूढ़ी ने दुआ देते हुए कहा, मगर शकरआरा के दिल में कांटा चुभो दिया था। उसको अपनी बेइज्जती–सी लगी और वह बहन के पास से उठकर सीधी, बिना खाना खाए, घर लौट आई! बहन की खामोशी खुरशीद को अखरी तो उसने फोन किया। जवाब में शकरआरा ने खुलूस का जवाब पत्थर मारकर दिया।

बहुत इतरा रही हो पहली औलाद जनकर! याद रखो, घर की रौनक

लड़कियाँ होती हैं, लड़का नहीं! माँ–बाप को पार वही लगाती हैं और सबसे बड़ी बात यह है कि खुद हमारे रसूल की बेटियाँ थीं, बेटा नहीं।

खुदा की कसम, आपा, मेरा यकीन करें, मुझे इस बात का जरा भी इल्म नहीं था कि आप बिना खाए ही घर लौट गई। मैं तो दो हफ्ते से बीमार हूँ। आज तबीयत कुछ संभली तो आपको फोन किया। अम्मा की मौत के बाद मायके के नाम पर तो आप ही बची हैं। लिल्लाह आपा! मुझ से ऐसी जली–कटी बातें न किया करें, मैं आपसे छोटी हूँ, आपके प्यार और देखरेख की हकदार हूँ। वह हक आप मुझसे हर बार छीन लेती हैं, जब मुझे उसकी शदीद की जरूरत होती है। आखिर क्यों? मेरी खता क्या है? इतना कहते–कहते खुरशीदआरा रो पड़ी थीं।

तुम हमेशा अपनी बड़ी बहन से टक्कर ले उसको नीचा दिखाना चाहती हो। तुम कभी छोटी बहन बनी हो? मेरी इज्जत की है? मेरा लिहाज किया है? हमेशा सीना तानकर दूसरों की नजर में ऊँचा उठने की कोशिश की है। वही हाल स्कूल में रहा तुम्हारा और वही हाल शादी के बाद...कभी मियां के हुस्न को ले तकब्बुर से भर जाती हो तो कभी लड़के की पैदाइश को लेकर मगरूर हो उठती हो! मैं अगर तुम्हारी छोटी बहन होती तो दिखाती कि बड़ों का लिहाज कैसे करते हैं। उनसे आजिजी और अदब से कैसे पेश आते हैं। उनकी ताजीम दूसरों के सामने कैसे करते हैं। तुमने न कभी इन बातों का लिहाज किया, न ही वह मोहब्बत दिखाई जो छोटों को बड़ों से होती है। मगर तुम कुछ भी कर लो, मेरे हुस्न और मेरे मियां के खानदान और धन–दौलत का मुकाबला कभी नहीं कर पाओगी...और सुनो, आइंदा यह दिखावा वगैरह मत करना। मुझे फोन पर लंबी ज्यादा बातें करना वैसे भी पसंद

नहीं! शकरआरा ने फोन पटक दिया।''[340]

जातीय संघर्ष

सामाजिक संघर्षों का प्रमुख कारण जातीय संकीर्णता है। यह समस्या दूसरे देशों की बजाय भारत जैसे देश में प्रमुख रूप से पाई जाती है। हम कुछ ऐसे जातीय पूर्वाग्रहों को ग्रहण करते हैं क्योंकि इनसे हमारी सुरक्षा, प्रतिष्ठा व मान्यता जैसी गहन आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। जातीय संघर्ष का मुख्य कारण सामाजिक व्यवस्था में जाति विशेष को श्रेष्ठ व हीन मानना है। ऐसे संघर्ष हमारे भारत जैसे देश में प्रमुख रूप से मनुष्य की मानसिकता से जुड़े हुए हैं। आज कट्टरपंथी लोगों के बीच जो संघर्ष होता है वह जातीय संघर्ष का ही एक भाग है। हमारे देश में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग आदि अनेक जातियाँ हैं और प्रत्येक जाति अपना संरक्षण चाहती हैं और अपनी जाति को दूसरी जाति से श्रेष्ठ समझती है। एक जाति का शासन के साथ, कट्टरपंथी का जातीय समीकरणों के साथ, किसी जाति विशेष का जाति विशेष के साथ होने वाले संघर्ष ही जातीय संघर्ष हैं। यही संघर्ष हमारे समाज में एक सामाजिक बुराई के रूप में भयानक रूप धारण कर स्थपित हो जाते हैं। चाहे कानूनी रूप में विभिन्न जातियों को समर्थन मिलता है। कुछ जातियाँ अपने हितों की रक्षा के लिए हड़ताल व नारेबाजी करते हैं ये सभी जातीय संघर्ष का ही हिस्सा है। यद्यपि कानूनी रूप से विभिन्न जातियों के बीच ऊँच–नीच की भावना को स्वीकार नहीं किया गया है फिर भी विभिन्न जातियों में द्वेष की भावना बनी रहती है। इन जातीय संघर्षों के कारण ही आज हमारी राजनीति का मुख्य आधार जातिवाद बन गया है। राजनीतिज्ञ लोग जाति के आधार पर एक–दूसरे से झगड़ा करवाते हैं जिसके कारण जनता हमेशा इन आपसी संघर्षो में उलझी रहती है। नासिरा शर्मा जी ने अपने उपन्यासों में इस जातीय संघर्ष को उजागर किया है। भेदभाव की यह भावना वहाँ अधिक पाई जाती है जहाँ सांस्कृतिक, सामाजिक व आर्थिक जीवन में बहुत विभिन्नता हो। रंग, रूप, नस्ल आदि की दृष्टि से इनमें विभिन्नताएँ पाई जाती हैं वही हमारी संस्कृति, रीति–रिवाज, परम्पराओं, मान्यताओं, खान–पान, वेशभूषा में भी विभिन्न प्रकार की

---

340 नासिरा शर्मा 'कुइयाजान' सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2013 पृ0 254

विभिन्नताएँ हैं जिसके कारण जातीय संघर्ष हमारे लिए बहुत बड़ा खतरा सिद्ध होते हैं और ये हमारे देश के लिए एक कलंक है। उदाहरण के रूप में अमेरिका में नीग्रो व श्वेत प्रजाति के बीच, अफ्रीका में श्वेत व श्याम जातियों के बीच संघर्ष को भी दिखाया गया है। यह जातीय भेदभाव सार्वजनिक स्थल, स्वास्थ्य व चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं, सामाजिक सुरक्षा व पारस्परिक सम्बन्धों में भी देखा जा सकता है। सांस्कृतिक क्षेत्र में यह जातीय भेदभाव जीवन स्तर की विभिन्नता से जन्म लेता है। इसका एक उदाहरण 'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास में देखिए—"ट्रेन दीवानादार चली जा रही थी। अब उसके बाहर सिर्फ़ अंधेरा था, काला—गहरा—अथाह समन्दर। रफ़त भाई अपनी खामोशी को तोड़ते हुए, फिर बातों में डूबने लगे। एक खूबसूरत जिन्दगी का नक्शा। जिसमें रफ़त भाई थे, वह खुद थी और दुनिया के सारे सुख उसके क़दमों तले पड़े थे। वह ख़्वाबों की दुनिया में खो गए। वह तरक़्क़ी करना चाहते थे। इस बढ़ती—भागती दुनिया में वह खुलकर जीना चाहते थे। कुएँ का मेंढक बनना उन्हें क़तई पसन्द न था। किसी एक जगह से जड़ा रहना उन्हें किसी लानत से कम नहीं लगता था। इस वजह से वह अपनी भावी पत्नी को उस कुएँ से निकालकर एक ऐसी दुनिया में ले जा रहे थे, जहाँ जिन्दगी आधुनिकता पर क़ायम है, नए अहसास में पलती जिन्दगी सिसकती नहीं है, बल्कि खुल के दमकती है। बोसीदा रस्मों के आगे घुटने नहीं टेकती है, बल्कि पुख़्ता इरादों के अंगारों पर चलती ज़िन्दगी हंसती है। यह जातीय भेदभाव, यह अमीर—गरीब का फ़र्क, मजहब के नाम पद दकियानूसी ख़्यालात, यह सब ज़िन्दगी के बहाव में पड़ने वाले रोड़े हैं, जिनसे हमें टकराना है, लड़ना है, क्योंकि बहते पानी को अपना रास्ता बनाना ही पड़ता है। इन पत्थरों को हमें तोड़ना होगा, इन्हीं हाथों से।"[341]

उपयुक्त विवेचन के आधार पर कहा जाता है कि नासिरा शर्मा के उपन्यासों में व्यक्त सामाजिक मूल्य—संघर्ष वैयक्तिक संघर्ष से आरम्भ होकर पारिवारिक संघर्ष, माता—पिता, भाई—बहन के संबंधों के संघर्ष की सीढ़ियाँ चढ़ते—चढ़ते जातीय संघर्ष में परिवर्तित हो जाते हैं। भारत के संदर्भ में नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों में इन संघर्षों की विवेचना की है। उनके उपन्यासों में सामाजिक जीवन—मूल्य बहुत तीव्र

---

[341] नासिरा शर्मा'ठीकरे की मंगनी', किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण—2013 पृ0 29

गति से परिवर्तित हुए हैं। जहाँ संयुक्त परिवार अब कहीं भी दिखाई नहीं देते, व्यक्ति आणविक परिवारों की तरफ आकर्षित होता जा रहा है। मनुष्य में अकेले रहने की इस प्रवृत्ति ने मानवीय संबंधों को बिल्कुल भूला दिया है। बाहर की भौतिकता भरी चका–चौंध उसे अपने परिवारों से अलग कर रही है। व्यक्ति गाँवों को छोड़कर शहर की तरफ भागने लगा है। वैवाहिक जीवन खतरे में पड़ने लगा है। अब पति–पत्नी में अहंकार की भावना ग्रस्त हो गई है। नयी पीढ़ी पुरानी पीढ़ी को तुच्छ नज़र से देखती है। आज प्रत्येक व्यक्ति अपने सुखी–सम्पन्न जीवन के लिए एक जगह से दूसरी जगह भटक रहा है। व्यक्ति तनाव, कुंठा भरा जीवन व्यतीत कर रहा है। वह अपने सुख–दुख को किसी के साथ बाँट नहीं सकता। इस प्रकार से सामाजिक मूल्यों का निरन्तर ह्रास हो रहा है। लेखिका ने इन समस्त समस्याओं का चित्रण करते हुए किसी भी वर्ग या समाज की समस्याओं को स्थान न देकर वर्ग भेद को कम करने का प्रयास करते हुए 'सर्वधर्म समभाव' पर अपना विश्वास प्रगट किया है।

3. सांस्कृतिकता

नासिरा शर्मा ने मानवीय संवेदनाओं, युगबोध, यथार्थबोध तथा मानव अधिकार का आपस में समन्वय एवं संयोजन किया। उन्होंने अपनी लेखनी से मानव की सूझ–बूझ, विवेक, भाषा, संवेदना एवं कथा साहित्य की सरसता को संवेदनात्मक बनाने का प्रयास किया है। अपनी रचनाओं के माध्यम से बदलती हुई परिस्थितियों, नये युग, नये विचार, नये स्वप्न एवं नई चुनौतियों का सटीक विवेचन प्रस्तुत किया है, जिससे समाज को एक नया आयाम और नये सरोकार मिलें।

लेखिका ने अपनी संघर्ष गाथा में जीवन की पीड़ाओं एवं उससे जुड़ी संवेदनाओं एवं वेदनाओं को गुणातीत किया है, साथ ही मानव जीवन को जीवट एवं सशक्त बनाने का प्रयास किया है। आपने ऐसे बहुत अनुभव प्राप्त किये, जिसमें समाजवाद, साम्राज्यवाद एवं मार्क्सवाद को जीवित एवं बदलते देखा है। उन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा बदलते मानवीय मूल्यों, संवेदनात्मक सरोकारों को भी गूढ़मय बनाया। नासिरा शर्मा ने अपने विचारों, भावनाओं को संवेदनात्मक और संस्कृतिमय बनाकर उन्हें विभिन्न उपन्यासों, कहानियों, रिपोर्ताज, नाटकों एवं यात्रा वृत्तान्त से सम्मिश्रण कर जीवन के तहखानों तक ले गयी और उन्हें व्यवहार में

लाने का प्रयास किया। प्रत्येक रचना में संवेदना, युगबोध का वर्चस्व है जो जीवन के कई फलकों के रूप में दिखलाई पड़ती हैं। जैसे– शामी कागज में इंसानियत को खड़ी इबारत को संवेदनाओं एवं युगबोध के माध्यम से मानवीय समाज को एक नई दिशा दी। उनकी संवेदनाएँ मील का पत्थर हैं, जो पूरे समाज के लिए अनुभूतियों की प्रेरणामयी पिटारा और पुलन्दा है।

नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में विभिन्न संस्कृतियों जैसे–हिन्दू–मुस्लिम का चित्रण देखने को मिलता है। इनके अधिकांशतः कथा साहित्य में मुस्लिम संस्कृति के दर्शन होते हैं। नासिरा शर्मा स्वयं मुस्लिम सम्प्रदाय से जुड़ी हैं, जैसे कि इनका विवाह हिन्दू से हुआ है तथापि कहीं–कहीं हिन्दू संस्कृति का चित्रण किया गया है। इसके साथ ही इन्होंने अपने कथा साहित्य के नायक–नायिकाओं पर पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव को दिखाया है। इनके कथा साहित्य की विशेषता रही है कि यह हिन्दू–मुस्लिम एकता पर बल देती हैं। इन्सान को इन्सान बनाना ही इनके कथा साहित्य की प्रमुखता है।

'ठीकरे की मँगनी' उपन्यास मुस्लिम संस्कृति पर आधारित है। इसकी नायिका महरूख जैदी है, जो जैदी खानदान की पहली लड़की है। मुस्लिम परिवार में लड़कियों को पढ़ाना या बाहर जाना मना होता है और फिर विवाह से पहले तो बिल्कुल नहीं। महरूख के ताया उसे विवाह पूर्व उसके होने वाले मंगेतर के साथ बाहर पढ़ने जाने के लिए मना करते हुए कहते हैं, "सर का बोझ हल्का करना है तो कायदे से करो, लड़की को कुँए में मत ढ़केलो। सुना अमजद, अव्वल तो महरूख हम पर बोझ नहीं है मगर दुल्हन से कहो कि लड़की शादी के बाद ही आगे पढ़ने बाहर जाएगी, वरना बहुतेरे लड़के हैं। हाथ पीले ही करने हैं तो हो जाएंगे। लड़कों का अकाल नहीं पड़ा है इस खानदान में।"[342]

महरूख की दादी पुराने रीति–रिवाजों को मानने वाली थी लेकिन समय के साथ–साथ वही बदल गई। वह सोचती है, "वह जमाना कब का लद चुका है, जब औरत नए–नए पकवान बनाकर, ससुराल वालों की खिदमत करके मियाँ का दिल जीतती थी, आज तो उन सबके साथ बाहरी दुनिया में अपने पैर जमाने हैं। घर

---

[342] नासिरा शर्मा : ठीकरे की मंगनी, पृष्ठ किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2013 सं0 24

बाहर दोनों जगह अपनी खूबी का सिक्का जमाना होता है, फिर पढ़ी–लिखी लड़कियां किसी पर बोझा बनकर नहीं रहतीं, बल्कि गिरे वक्त में घर को मर्द की तरह सम्भालती हैं।''[343]

महरूख को अपने साथ ले जाते हुए रफत पुराने सांस्कृतिक मूल्यों को खण्डित करते हुए नये मूल्यों की ओर उसका ध्यान आकृष्ट कराते हुए कहता है, ''आज जरूरत है समझदार दिमागों की, जो बदलते वक्त की मांगों व जरूरतों को समझ सके। इन्सान न जंगल से कच्चे गोश्त और कन्दमूल से लेकर चकमक पत्थर और खाल से लेकर आज मशीनों तक का कितना लम्बा सफर तय किया है। इस मसले पर हमें गौर करना है कि इन्सान की लगातार होती तरक्की की इस कशमकश में हमें शामिल होना है या फिर एक खानदान की बनाई हुई बोसीदा पड़ती रिवायतों की चक्की में हमें गेहूँ के साथ घुन की तरह पिस जाना है।''[344]

शिया, मुसलमानों में मोहर्रम का बहुत महत्व है। महरूखी शिया खानदान की लड़की है। शियाओं में मोहर्रम का चाँद दिखते ही काले रंग के कपड़े पहनने शुरू कर देते हैं और इमामबाड़े को सजाने के लिए ''घर की बहुएँ अलम खड़े करके चूड़ियां बढ़ाने लगीं। शियाओं का विचार है कि हुसैन की शहादत के बाद सोग मनाने के लिए चूड़ियों का उतारना, जेवर न पहनना और गुलाबी, लाल, पीले, नीले कपड़े (उत्सव के रंग) नहीं पहनना चाहिए, जब तक चालीस दिन पूरे नहीं हो जाते। यहाँ तक कि आँखों में सुरमा और सर में तेली नहीं डालते कुछ लोग।''[345]

महरूख शहर में रहकर बदल चुकी थी उसे यह सब फिजूलखर्ची लग रहा था। वह इस मुस्लिम संस्कृति को बदलने के पक्ष में थी। इसलिए वह अपनी अम्मी सें कह देती है, ''यह क्या बात हुई अम्मी, जो होता चला आया है, वह क्यों हो चला जाएगा? पहले और आज की जरूरतों में बहुत फर्क है। यह बात हमें समझनी पड़ेगी।''[346]

---

[343] नासिरा शर्मा : ठीकरे की मंगनी, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2013 पृष्ठ सं0 26

[344] नासिरा शर्मा : ठीकरे की मंगनी, पृष्ठ सं0 32

[345] नासिरा शर्मा : ठीकरे की मंगनी, पृष्ठ सं0 50

[346] नासिरा शर्मा : ठीकरे की मंगनी, पृष्ठ सं0 51

'शाल्मली' उपन्यास हिन्दू संस्कृति पर लिखा गया है। इसमें ग्रामीण तथा शहरी दोनों ही संस्कृतियों का चित्रण किया गया है। इसकी नायिका 'शाल्मली' अपने माता–पिता की अकेली संतान है। पिता हमेशा शाल्मली को बेटी नहीं मानते थे और माँ लड़की की शादी की चिन्ता में डूबी रहतीं। पिता के लाख समझाने पर वह कह उठती, ''संस्कारों को क्या तुम्हारे कहने से बदल डालूँ? अपनी माँ से जो सुनती आई हूँ, आँखे खोलकर जो देखा है, उनसे आँखें कैसे चुरा लूँ?'' [347]

'अक्षयवट' उपन्यास में इलाहाबाद शहर में हिन्दू और मुस्लिम दोनों ही संस्कृतियों का बहुत सुन्दर वर्णन देखने को मिलता है। शहर में सांस्कृतिक एकता बनी हुई थी। एक ओर दशहरा मनाने की तैयारी चल रही थी तो दूसरी ओर बलुवा घाट के चौराहे पर स्थित शाह बाबा की तामझाम फैला था। हिन्दू धर्म में सांस्कृतिक मूल्यों का विशेष महत्व है। इलाहाबाद शहर में दशहरा मनाने के लिए लोग अलग–अलग दलों में विभाजित हो जाते हैं। मगर वह अपनी संस्कृति से मुँह नहीं मोड़ते हैं। ''रामलीला कमैटी के प्रबन्धक समाज की बदलती रूचियों को नजर में रखते हुए इस बार की सजावट के लिए चिन्तित थे। रोज बाजार में नयी–नयी चीजें आती हैं, जिनकों सब अपने घर–मौहल्ले में सजाना चाहते हैं। इसमें कोई शक नहीं था कि परम्परा निभाने के लिए छोटे बड़े व्यापारी, हिन्दू हों या मुसलमान दुकानदार, अपने हिसाब से अपने–अपने इलाकों को सजाने के लिए आतुर थे।''[348]

अंग्रेजी सरकार ने भारत में कई वर्षों तक शासन किया, मगर वही सांस्कृतिक मूल्यों को खण्डित नहीं कर पाई। ''विजयदशमी का पर्व पूरे भारत में मनाया जाता है मगर जो एकता इलाहाबाद में नजर आती है वह कहीं और नहीं। इसी एकता को तोड़ने और हिन्दू–मुसलमान को दो धर्मों के खांचों में बांटने की अंग्रेजों ने बड़ी कोशिश की थी। उसकी नीति कुछ वर्षों तक दशहरा बन्द करवाने में सफल जरूर हुई मगर शहर की सांस्कृतिक एकता को तोड़ नहीं पायी।''[349]

इसी प्रकार रमजान का त्यौहार बड़े जोर–शोर से मनाया जा रहा था। ''बाजार में रौनक उतर आई थी। बताशे फैनी के छल्ले और खजूर की ढ़ेरियाँ

---

[347] नासिरा शर्मा : शाल्मली,राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, संस्करण–2012 पृष्ठ सं0 21

[348] नासिरा शर्मा : अक्षयवट, भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण–2013 पृष्ठ सं0 21

[349] नासिरा शर्मा : अक्षयवट, भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण–2013 पृष्ठ सं0 18

लोगों को दूर से नजर आ रही थीं। इबादत का यह महीना है इसलिए नयी जिल्द के कुरान, अंधेरे में चमकने वाली तस्वीहें, मखमल और चटाई की बनी जानमाजें, रहल और कई तरह की जरूरी खरीदारियाँ हो रही थीं।''[350]

सांस्कृतिक मूल्यों में समय के साथ–साथ परिवर्तनी होने लगा है। शहरी परिवेश में आकर व्यक्ति अपने पुराने त्यौहारों, रीति–रिवाजों के साथ नये अवसरों को बनाने मी शामिल होने लगा है। जहाँ दशहरा, दिपावली, ईद, रमजान आदि सामाजिक त्यौहारों का अपना मूल्य होता था वहीं आधुनिक परिवेश में आये व्यक्ति ने नव वर्ष, वेलेनटाइन–डे, प्रेस्टीज ईशू आदि को भी महत्व दिया है। इन नये अवसरों को मनाने में नई पीढ़ी का विशेष महत्व है। वह पुराने सांस्कृतिक मूल्यों को भूलती जा रही है और नये जमाने के साथ जी रही है। नव वर्ष के अवसर पर ज़हीर की मित्र मण्डली रेस्तराँ में जा पहुँची। वहाँ की तड़क–भड़क को देखकर, ''वे अपने को बुजुर्ग महसूस कर रहे थे। इस बीच समय किस तेजी से बदला है, इसका अन्दाजा उन्हें आज हो रहा था कि हर लड़की–लड़के का कोई–न–कोई ब्वायफ्रैण्ड और गर्लफ्रण्ड था, जिसके साथ वह नये आने वाले वर्ष का सपना देख रहे थे। इनमें से जाने कितने जोड़े विवाह मण्डप तक पहुँचे और कितनों की मित्रता साल के मध्य तक जाते–जाते टूट गयी। सम्बन्धों का इतना जल्दी खिलना और उतनी ही शीघ्रता से कुम्हला जाना शायद यही आज का यथार्थ है?''[351]

सशक्त हस्ताक्षर एवं वरिष्ठ साहित्यकार नासिरा शर्मा द्वारा विरचित उपन्यासों को अध्ययन का विषय बनाया है। नासिरा शर्मा उन विरले रचनाकारों में से एक हैं जिनकी हर कृति का कैनवास बहुत विराट है। इनके उपन्यासों में गहरे शोध की छाया है। साहित्य अकादमी द्वारा सम्मानित एवं किस्सागोई के फ़न में माहिर नासिरा जी के उपन्यासों में नए–पुराने रिश्तों की दास्तान है, लुप्त होती संवेदनाओं की पड़ताल है, वैश्विक परिदृश्य में समाज की बंदिशों में जकड़ी हुई इंसानियत की चीख है तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक तंतुओं के ताने–बाने को गहराई समझने का सफल प्रयास है।

---

[350] नासिरा शर्मा : अक्षयवट, भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण–2013 पृष्ठ सं0 34

[351] नासिरा शर्मा : अक्षयवट, भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण–2013 पृष्ठ सं0 29

4 धार्मिकता –

अनुचितता, शुभ–अशुभ को लेकर धर्म ने सदैव एक निर्णायक सत्ता का कार्य किया है। धर्म की जीवन शक्ति का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि आज के अति आधुनिक युग मी विभिन्न घात–प्रतिघातों के उपरान्त धर्म जीवित है। वैदिक साहित्य में धर्म को धारण करने के अर्थ में स्वीकार किया गया है। महाभारतकार ने धर्म से अर्थ और काम की सिद्धि मानी है जबकि वृहदारण्यक उपनिषदकार ने धर्म एवं सत्य को एक ही माना है। इसके अतिरिक्त पाश्चात्य चिन्तकों नी धर्म को 'परम्परा के अनुकरण' रूप में स्वीकार करते हुए उसे समाज का आधार माना है। कांट ने धर्म को नैतिकता की संज्ञा दी है तो मैक्समूलर ने धर्म को मानसिक संकाय कहा है। सामाजिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों के मूल आधार धर्म का भारतीय संस्कृति से अटूट एवं प्रगाढ़ सम्बन्ध रहा है। धर्म का जीवन से अभिन्न सम्बन्ध देखते हुए भारतीय जीवन में प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से धर्म के प्रति विशेष झुकाव रहा है।''[352]

'जिन्दा मुहावरे' उपन्यास में हिन्दुस्तान–पाकिस्तान बँटवारे के बाद धार्मिक व नैतिक मूल्य नष्ट होते जा रहे थे। मन्दिर व मस्जिद में न कोई पुजारी दिख रहा था न मौलवी। सभी को अपने–अपने भगवान व अल्लाह पर विश्वास था कि जल्दी ही यह लड़ाई समाप्त हो जाएगी और वह दुआ कर रहे थे। ''हमारे गुनाह माफ कर। हमारी गलतियाँ दरगुजर कर मेरे माबूद। हमें अपनी जमीन पर इज्जत बख्श। तू तो सारी कायनात का मालिक है, अपने बन्दों का इम्तहान इतना सख्त न ले। हमारा सब्र न अजमा। हम पर रहम खा।''[353]

'इन्सानी नस्ल' कहानी संग्रह की कहानी 'अपराधी' में राम मनोहर त्यागी पुलिस महकमे से रिटायर्ड और धर्म में विश्वास करने वाले शुद्ध शाकाहारी हैं। पत्नी की मृत्यु के पश्चात् वह अपने बेटे–बहू के साथ रहने लगे। लेकिन बहू–बेटा जहाँ रहते थे वहाँ इस प्रकार का कोई भेदभाव नहीं था। धार्मिक रूढ़िवादी विचारों से

---

352 डा0 राजेन्द्र प्रतापः हिन्दी उपन्यास तीन दशक, पृष्ठ सं0 142

353 नासिरा शर्मा : जिन्दा मुहावरे, वाणी प्रकाशन,, नई दिल्ली, संस्करण–2012 पृष्ठ सं0 82

घिरे राम मनोहर अपने बेटे के इस बदले हुए रूप से चकित हो सोच रहे थे, ''हो न हो यह पड़ौस की दोस्ती का असर है। दीक्षित के घर ईसाई बहू है और कुरैशी का कहना ही क्या। आखिर आजू–बाजू तो यही दो पड़ौसी हैं। जिनके घर सारी शाम बच्चे, बहू आते–जाते रहते हैं, छुट्टी के दिन धुरेंदर का अड्डा भी वहीं जमता है। मेरे आने से पहले वे लोगी खूब अड्डा जमाते होंगे। इन्हीं थाली–कटोरी, गिलास में खाते–पीते होंगे।''[354]

चतुर्वेदी के घर माँस देखकर उनका दिमाग पूरा गर्म हो गया था, घर लौटते ही धुरेंदर से बोले, ''मेरा धर्मभ्रष्ट होते–होते बच गया। लेकिन बचा कहाँ? पहले तो चाय एक दो बार पी चुका हूँ, मगर माँसवाली बात...।''[355] धुरेंदर के विचार खुले थे वह अपने पिता को समझाते हुए कहता है, ''ये सबसे बड़ी छोटी बातें हैं, पापा। यहाँ आप जितना देखेंगे उतना ही लगेगा कि आप कुछ नहीं जानते हैं। हर आदमी आपके पैमाने से अलग है। हर सच झूठ लगता है और हर झूठ सच।''[356]

राम मनोहर त्यागी के समझ में आ गया था। वह धर्म के झूठे बन्धनों से निकलकर प्रसन्न हो नई कविता की कुछ पंक्तियाँ लिखते हैं, ''इन्सान बुनियादी रूप से एक वृक्ष ही तो है जो पहले–पहले अंकुर के रूप में फोड़ता है दो कोपलें/कोंपलें बन जाती हैं जब कोमल शाख तक शाखों से फूटती हैं अनेक पत्तियाँ/शाख टहनी, पत्तियों के संग सबको बाँधे रखता है तना/जैसे बांधती है अनेक इन्सानों को/जो धर्म में होते हैं अलग–अलग।''[357]

'पाँचवा बेटा' कहानी में अमतुल के चार बेटे हैं वह मोहर्रम से पहले इमामबाड़े की छत को ठीक कराना चाहती है, मगर चारों बेटे शहर नौकरी करने चले जाते हैं और जबी कुछ कहो तो अगले साल पर बात टाल देते हैं। वह बैठे–बैठे सोच रही थी कि ''चार पहाड़ से लड़के जनकरी उन्हें कौन–सा सुख मिला। किसी लड़के को न माँ की फिक्र है न दीन मजहब की, बस नौकरी करे जा रहे हैं। महीने में भेजे गये मनीआर्डर क्या मेरा अकेलापन दूर कर सकते हैं? क्या

---

[354] नासिरा शर्मा : अपराधी, संस्करण–2015 पृष्ठ सं0 25
[355] नासिरा शर्मा : अपराधी, संस्करण–2015 पृष्ठ सं0 28
[356] नासिरा शर्मा : अपराधी, संस्करण–2015 पृष्ठ सं0 32
[357] नासिरा शर्मा : अपराधी, संस्करण–2015 पृष्ठ सं0 52

इस रहमान बेलदार का दिमाग सीधा कर सकते हैं जो सौ बार बुलाने परी न आया?''[358]

मोहर्रम के दिन करीब थे और इमामबाड़े को सजानाी जरूरी था लेकिन डर बारिश का था। यदि बारिश हो जाती तो सब कुछ खत्म हो जाता। अमतुल इसी भय से युक्त हो इमामबाड़े को सजा रही थी। वहीं उसकी सहेली का लड़का सुलाखी था जो हिन्दू है, जिसके द्वारा इमामबाड़े को छूनाी अमतुल को पसन्द न था। लेकिन सुलाखी स्वयं को उनका बेटा समझता है। इसीलिए जब जोरदार बारिश होती है तो वह इमामबाड़े की छत पर चढ़कर उसे तिरपाल से ढक् देता है। इस पर अमतुल नाराज हो मुँह ही मुँह बड़बड़ाई, ''यह क्या कर डाला सिर फिरे ने। मेरे मिट्टी पलीद कर दीन–दुनिया तबाह कर डाली।''[359]

'विरासत' कहानी में पुल्लन मियाँ अनाथों के लिए एक कब्रिस्तान का निर्माण करवाते हैं। उनके घर में रहने वाले बुल्लन व हिम्मत पर उस कब्रिस्तान की जिम्मेदारी होती है। आधुनिक रंग–ढ़ंग व बदलते परिवेश में वह दोनों धार्मिक व नैतिक मूल्यों को विघटित कर नये रूप में ढ़लना चाहते हैं। वह बोले, ''यहाँ पर लावारिस का कब्रिस्तान बनाए के मालिक ने हमरे खर्चे–पानी का न सोचा... अब न कब्र की खुदाई मिलती है न मुर्दे के घर से खाना आता है। वही बस मोहर्रम या ताजिया सजाए, उठाए, दफनाए में जो चढ़ावा–हिस्सा मिल जाए। ईद मा एक जोड़ी नया कपड़ा... उससे रोज का भूखा पेट कहत है... किस मुँह से बताए यह सब मालिक को कि खर्चे में बहुत तंगी है, जो खेत–क्यारी मिला रहा ओहि से उपजे अनाज से एक समय पेटीदार हो जाता है।''[360]

'ततइया' में शन्नो की सास धर्म में विश्वास रखने वाली है। एक दिन शन्नों को एक शराबी मेले में से पकड़कर ले जाता है और कहीं दूर छोड़ देता है। बारिन, बहू को घर से बाहर निकालने का फैंसला कर देती है। लेकिन शन्नों का पति युद्धवीर उसे कहीं नहीं जाने देता। चाय बनाती शन्नों को देखकर वह बोली, ''क्यों धर्मभ्रष्ट करने पर उतारू है कलमुँही? तेरे हाथ का जल पीकर नरक जाना है क्यों?

---

[358] नासिरा शर्मा : पाँचवा बेटा, पृष्ठ सं0 32

[359] नासिरा शर्मा : पाँचवा बेटा, पृष्ठ सं0 35

[360] नासिरा शर्मा : विरासत, पृष्ठ सं0 32

जा बैठे कोपीवन में नटनी।''[361]

अन्ततः धार्मिक ढ़ोंग पाखण्ड में जीती बारिन अपनी अन्तरात्मा को धिक्कारती है। ''आखिर वह यह सब क्यों कर रही है? दूसरों के लिए लडती है मगर अपनी... उसके अन्दर न्याय का यह दोहरा मापदण्ड क्या? कहीं वह अपने को सास समझकर आँखों पर पट्टी तो नहीं बाँधे हुए हैं? शन्नो का दुःख उसे क्यों नहीं दिखता और उसके लिए वह व्याकुलता अपने अन्दर नहीं पाती है जो गीता के लिए उभरी थी क्या वह यह सब अपने प्रदर्शन के लिए तो नहीं करती है कि वह बड़ी न्यायवाली दयालु आत्मा है? पूरी बिरादरी की मुखिया बनने में उसको आत्मसन्तुष्टि मिलती है। औरतों की वकालत करते हुए कहीं उसे अपना महत्व जान पड़ता है या फिर... शन्नो को लेकर वह उतनी निष्ठुर क्यो ं हो गई? कहीं उस घटना का सारा आक्रोश अनजाने में शन्नों पर खाली कर अपने अपमानित आहत मन का बदला तो नहीं चुका रही है।''[362] यह सोच विचार करती हुई बारिन बहू के पास आकर बोली, ''...पापी तो वह राक्षस था, तू पापिन क्यों होने लगी... मेरी मत मारी गई थी। तुझे मेरी उम्र लगे...।''[363]

निष्कर्ष–

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि लेखिका ने अपने कथा साहित्य में विभिन्न संस्कृतियों जैसे हिन्दू–मुस्लिम संस्कृतियों का चित्रण किया है। साथ ही नारी समस्या, सामाजिकता, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं नैतिक मूल्यों का विघटन करते हुए इन्होंने प्रेम, त्याग, लोक सेवा आदि वैयक्तिक मूल्यों को भारतीय संस्कृति के आदर्श मूल्यों में स्वीकार किया है। यहाँ तक की समाज में व्याप्त धार्मिक मतभेदों व रूढ़िवादी नैतिक मूल्यों से संघर्षरत् इनके पात्र समाज में एक नई रोशनी को बढ़ाने में लगे हुए प्रतीत होते हैं। नासिरा शर्मा ने अपने कथा साहित्य के माध्यम से राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक एवं नैतिक, शैक्षणिक एवं प्रशासनिक व्यवस्थाओं पर कार्य किया, जिनकी अपनी एक दुनिया भीतर और बाहर होती है, जिन्होंने अपने व्यक्तित्व को गरिमामयी और गौरवमयी बनाने के लिए मन की

---

[361] नासिरा शर्मा : ततइया, पृष्ठ सं0 69

[362] नासिरा शर्मा : ततइया, पृष्ठ सं0 73

[363] नासिरा शर्मा : ततइया, पृष्ठ सं0 77

संवेदनाओं को जो मानव के भीतर पाई जाती है, उसका यथार्थ चित्रण किया है। नासिरा शर्मा ने समाज के प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति को सशक्त बनाने का प्रयास किया है, जिसमें जीवन की आधुनिकता और भौतिकवादिता की पगडंडियों पर लोगों को नियंत्रित, नियमित और अनुशासित बनकर उस पर चलने का मार्ग बताया है।